अंक–1, वर्ष–1

Trilok
त्रिलोक

विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला एवं संस्कृति की शोध पत्रिका

मुख्य संपादक
गणेश बेरवाल

प्रबंध संपादक
प्रो. बी.एल. भदानी
प्रो. शिवनाथ सिंह
बलवीर सिंह
प्रो. मदन लाल मीना
प्रो. गजेन्द्र कुमार महरिया

सह संपादक
श्याम महर्षि
संदीप कुमार मील
डॉ. हरलाल सिंह
डॉ. रेणु महलावत

त्रिलोक सिंह रिसर्च एंड डेवलपमेंट संस्थान, सीकर (राज.) 332001
Reg. No. : COOP/2024/SIKAR/500119
&
लिट्रेरी सर्किल

अंक–1, वर्ष–1

प्रकाशीय एवं विज्ञापन कार्यालयः
त्रिलोक सिंह रिसर्च एंड डेवलपमेंट संस्थान, सीकर (राज.) 332001
Reg. No. : COOP/2024/SIKAR/500119

मुद्रक : लिट्रेरी सर्किल, जयपुर (राज.)

प्रथम संस्करण 2025

सर्वाधिकार सुरक्षित
त्रिलोक सिंह रिसर्च एंड डेवलपमेंट संस्थान, सीकर (राज.) 332001
Reg. No. : COOP/2024/SIKAR/500119

संपादकीय कार्यालय

गणेश बेरवाल
किसान छात्रावास (जाट बोर्डिंग) सीकर, राज. 332001
मोबाईल न. 9414254222
E mail : trdisikar@gmail.com

सौजन्य : राजकीय संग्रहालय, सीकर

विषय सूची

क्र. सं.	लेख सूची	लेखक	पृ.सं.
1	हल्दीघाटी युद्ध में सैन्यबल का आकलन : रामशाह तंवर के सैन्य योगदान का विश्लेषण	बी. एल. भादानी	1
2	शेखावाटी की ''मूणा लिपि''	कैलाश चन्द्र घनश्याम पाण्डेय	20
3	जीवन की जल के साथ अतिव्यापिता	ओम प्रकाश शर्मा	28
4	शेखावाटी के जलस्रोतों और समाज	डॉ. रितेश व्यास	36
5	नेहरू की राजपूताने की ऐतिहासिक स्वराज्य यात्रा	डॉ. देवेन्द्र कुल्हार	40
6	मद्यपान : युवाओं की एक गंभीर समस्या	डॉ. सुरेन्द्र भास्कर	46
7	युगीन युगीन पाटन (सीकर)	प्रो. (डॉ.) मदन लाल मीना, डॉ. ओमपाल कुमार कालावत	53
8	हाकडा दरियाव का ऐतिहासिक उल्लेख	ओम प्रकाश शर्मा	71
9	1938 के सीकर–जयपुर संघर्ष में जाट किसानों की भूमिका	अरविन्द भास्कर	80
10	गाँधी के शिक्षा–चिंतन की बुनियाद	संदीप कुमार मील	87
11	Globalization and Aspirations : An Empirical Study in Popular Youth Culture of India	Dr. Gajendra Kumar Maharia	93
12	History and Contribution of Sãngaliyã Dhuni of Shékhãwãti Region: Special Reference to Bãbã Khinvãdãs Mahãrãj	Dr. Har Lal Singh	102
13	The Myth of Health Hazards from Cellphones	Balbir Singh Chaudhary	114

सम्पादकीय

''त्रिलोक'' का प्रथम अंक जारी कर रहे है, जिसमें विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला एवं संस्कृति आदि पर शोधपरक आलेख प्रकाशित करने का प्रयास किया गया है।

संस्थान का मुख्य नारा **''शिक्षा सब के लिए, आओ और सीखो।''**

यह सिर्फ शुरुआत मात्र है विशेष तौर पर प्रोफेसर भादानी, रितेश व्यास, डॉ. गजेन्द्र कुमार महरिया, अरविंद भास्कर, ओम प्रकाश शर्मा, बलबीर सिंह, प्रो. मदन लाल मीना, डॉ. ओमपाल कुमार कालावत, संदीप कुमार मील, डॉ हरलाल सिंह, पं. कैलाश चन्द पाण्डेय आदि विद्वानजनों के आभरी है जिन्होंने अपने शोध से जुड़ी हुई सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयास किया।

यह अंक हमारा प्रथम प्रयास है ,इसमें काफी त्रुटियां रहने की संभावना है। आप लोगों के सुझाव हमें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते रहेंगे।

आशा करता हूं आप सभी का निरन्तर सहयोग मिलता रहेगा।

गणेश बेरवाल

हल्दीघाटी युद्ध में सैन्यबल का आकलन : रामशाह तंवर के सैन्य योगदान का विश्लेषण

बी. एल. भादानी

मेवाड़ के सिसोदिया शासक महाराणा प्रताप एवं मुग़ल साम्राज्य के शहंशाह अकबर की सेनाओं के मध्य 18 जून 1576 को खमणोर नामक स्थान पर हुवा संघर्ष इतिहास के पन्नों एवं जनमानस में हल्दीघाटी युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। इस युद्ध के परिणाम से पूर्व दोनों की संख्या का आकलन करना आवश्यक हो जाता है। सरसरी तौर पर तो सैन्य बल की दृष्टि से यह युद्ध दो असमान शक्तियों के मध्य था जिसकी पुष्टि युद्ध में उपस्थित अकबरकालीन इतिहासकार बदायूनी के कथन से होती है जब वह दोनों सेनाओं के सैनिकों की संख्या अंकित करता है। उसके अनुसार मुग़ल एवं सिसोदिया सैनिकों की संख्या क्रमशः पाँच एवं तीन हजार थी। उसके द्वारा मुग़ल सैनिकों की संख्या का दिया गया आंकड़ा तथ्यात्मक रूप से सही हो सकता है क्योंकि वह स्वयं सैनिक अभियान का हिस्सा था लेकिन सिसोदिया सेना की संख्या का उसका आंकड़ा पूर्णतः अनुमान पर आधारित है जिसके सही होने की सम्भावना अत्यंत कम है। मेरी राय में इसके तीन सम्भावित कारण हो सकते है प्रथम, बदायूंनी का शत्रु सेना की पंक्ति में दूर से खड़े होकर सिसोदिया सेना का अनुमान लगाना द्वितीय, सिसोदिया सेना के हल्दीघाटी के मुहाने एवं खुले मैदान के मध्य अवस्थिति के कारण अनुमान लगाना मुश्किल एवं तृतीय भील सैनिकों का पहाड1ों पर तैनात रहना। बदायूनी के लगभग आठ दशक के पश्चात मारवाड़ का इतिहासकार मुहंता नैणसी मुग़ल सैनिकों की गणना चालीस हजार जबकि मेवाड़ी सैन्य संख्या नौ से दस हजार के मध्य बताता है जिससे भी दोनों पक्षों के मध्य असमान सैन्य शक्ति की पुष्टि होती है। इसका तात्पर्य यह हुवा कि कमजोर सैन्य शक्ति पक्ष अर्थात मेवाड़ी यौद्धाओं के हौसलों ने इस युद्ध को बराबरी का ऐतिहासिक संग्राम बना दिया।

आधुनिक इतिहासकारों में गौरीशंकर ओझा, गोपीनाथ शर्मा, देवीलाल पालीवाल, हुकमसिंह भाटी, श्रीकृष्ण 'जुगनू', चन्द्रशेखर शर्मा एवं अन्यों में बदायूनी एवं नैणसी के द्वारा अंकित आंकड़ों को उद्धृत करते हुवे मुग़ल

इतिहासकार के आंकड़ों को सत्यता के समीप मानकर स्वीकार किया है। मुग़ल सैनिकों के लिए हमारे पास बदायूनी के अतिरिक्त कोई अन्य साक्ष्य नहीं है जिसके आधार पर उसके साक्ष्य की सत्यता की पुष्टि की जा सके। लेकिन हम मेवाड़ी सैनिकों की संख्या का अनुमान आन्तरिक साक्ष्यों के विश्लेषण के आधार पर प्रयास करके वास्तविक संख्या के समीप पहुँच सकते हैं। इस अनुमान के लिए उन जागीरदारों एवं सरदारों के राजकीय ओहदे या उनकी जागीरों की रेख (अनुमानित आय)

एवं उनके द्वारा रखे जाने वाले सैनिकों की संख्या को आधार बनाया जा सकता है। इस पद्धति के माध्यम से हम महाराणा के सभी सहयोगियों के सैन्य बल का मोटे तौर पर पता लगा सकते हैं। खमनोर के इस युद्ध में सिसोदिया, ग़ैर–सिसोदिया – तोमर, राठौड़, सोनगरा, चौहान, डोडिया, झाला, पठान, ब्राह्मण, चारण, ओसवाल एवं भील आदि सम्मिलित थे। इस आलेख में ग्वालियर के पूर्व शासक रामशाह तंवर एवं उसकी बिरादरी या सैनिकों की संख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द– खमनोर, हल्दीघाटी, रामशाह तंवर, जागीरदार, जागीर, बदायूनी, नेणसी, सैन्यबल, रेख।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :

ग्वालियर के शासकों में मानसिंह (1486–1516 ई.) ही ऐसे थे जिसने इस क्षेत्र को पृथक पहचान दी। उससे सम्बन्धित प्रशस्तियों एवं समकालीन लेखकों के लेखन से इसकी पुष्टि होती है।[1] वह लगातार दिल्ली के सुल्तानों के साथ संघर्षरत रहा एवं सिकन्दर लोदी जैसे शक्तिशाली शासक भी सीधे ग्वालियर पर आक्रमण करने का साहस नहीं कर सका।[2] उसके दौर में संगीत, साहित्य एवं चित्रकला अपने चरमोत्कर्ष पर था। 1516 ई में अपने स्वर्गवास के पूर्व मानमन्दिर, गूजरी महल एवं बादलगढ़ जैसे भवनों का निर्माण करवाकर स्थापत्य के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किया।[3] इसीलिए मानसिंह का काल ग्वालियर का गौरवशाली युग कहलाता है। इस महान शासक का अन्त 1516 ई. में हुआ जिसके पश्चात उसका पुत्र विक्रमादित्य उसकी इस विरासत का स्वामी बना।

विक्रमादित्य में अपने पिता जैसी योग्यता तो नहीं थी। लेकिन विरासत में मिली सेना के साथ उसने सिकन्दर लोदी के उत्तराधिकारी इब्राहीम लोदी के आक्रमणों का वर्षों तक मुकाबला किया परन्तु अन्त में 1523 ई. में सुल्तान से सन्धि कर ली। सन्धि की शर्त के अनुसार विक्रमादित्य को ग्वालियर त्याग करना पड़ा एवं उसके स्थान पर शम्शाबाद की जागीर प्रदान की गई जो उसने स्वीकार कर ली।[4] इसके पश्चात ग्वालियर का तोमर शासक इब्राहीम

लोदी के दरबार का एक अमीर हो गया एवं अन्त में तीन वर्ष पश्चात लोदी के सच्चे सेवक के समान पानीपत के मैदान में 20 अप्रैल, 1526 के दिन बाबर के विरुद्ध युद्ध भूमि में संघर्ष करता हुआ वीरगति को प्राप्त हो गया।

उपर्युक्त पंक्तियों में ग्वालियर के तोमरों के गौरवशाली इतिहास को रेखांकित करने का उद्देश्य उस वंश के एक उत्तराधिकारी रामशाह तोमर (जिसे राजस्थानी दस्तावेजों में राजा रामशाह तंवर अंकित किया गया है) के मेवाड़ में शरण लेने के पूर्व की परिस्थितियों का वर्णन करना है। राजा विक्रमादित्य के द्वारा सुल्तान इब्राहीम के साथ 1523 ई. में सन्धि करने के पश्चात वह अपने पुत्र रामशाह सहित सुल्तान के साथ दिल्ली चला आया। ऐसा प्रतीत होता है कि तोमर राजा ने अपनी योग्यता के कारण लोदी के दरबार में सम्माननीय स्थान प्राप्त कर लिया था। अफगान अमीरों एवं सुल्तान के मध्य तनावपूर्ण सम्बन्धों के समय विक्रमादित्य ने इब्राहीम लोदी का साथ दिया। परिणामतः दोनों के मध्य घनिष्ट सम्बन्ध हो गए। 1526 ई. में मध्य एशिया के आक्रान्ता बाबर द्वारा जब दिल्ली पर आक्रमण किया गया तब विक्रमादित्य ने सुल्तान की ओर से युद्ध में भाग लिया एवं पानीपत में वीरतापूर्ण संघर्ष करते हुवे वीरगति प्राप्त की। ग्वालियर ने संस्कृति सम्पन्न एवं वीरोचित गुणों के स्वामी पूर्व शासक को खो दिया।[5]

1526 ई. से लेकर 1558–60 ई. में रामशाह तोमर के मेवाड़ आने से पूर्व तक वह अपने पैतृक राज्य ग्वालियर की पुनः प्राप्ति तक चम्बल की घाटियों को शरणस्थली के रूप में उपयोग लेता रहा एवं आक्रमण की तैयारी करता रहा। चूंकि उसका पैतृक राज्य उसके अधिकार में नहीं था इसलिए वह 'निष्कासित राज्य का राजा' हो गया इसीलिए सम्भवतः मेवाड़ के स्रोतों में उसे 'राजा' की पदवी के साथ अंकित किया जाने लगा।

1526 ई. में पानीपत विजय के पश्चात भारत की राजनीतिक परिस्थितियों में तेजी से बदलाव आ रहा था। लोदी सल्तनत के पतन के पश्चात बाबर के नेतृत्व में मुग़ल सत्ता की स्थापना ने शासन के चरित्र को परिवर्तित कर दिया था। लेकिन 1530 ई. में मुग़ल सत्ता के संस्थापक बाबर की मृत्यु ने साम्राज्य में संकट पैदा कर दिया। हालांकि पिता के स्वर्गवास के पश्चात हुमायूं राजगद्दी पर बैठा लेकिन उसके तीन भाइयों ने उसके लिए संकट पैदा कर दिया। अपने भाइयों के मध्य अन्तर्कलह के कारण वह अपनी स्थिति को मजबूत नहीं कर पाया था कि फरगना के प्रशासक शेरशाह सूरी ने 1540 ई. में चौसा के युद्ध में मुग़ल बादशाह हुमायूं को पराजित कर दिया एवं उसे हिन्दुस्तान के बाहर खदेड़ दिया। आगरा के समीप ग्वालियर की स्थिति ने उसके सामरिक महत्त्व को बढ़ा दिया था इसलिए हुमायूँ ने अपने

वफादार अमीर क़ासिम बेग को वहां नियुक्त कर दिया था। आगरा एवं दिल्ली पर आधिपत्य के पश्चात शेरशाह 1542 ई. में ग्वालियर पर आक्रमण की योजना बना रहा था। तब रामशाह इस आशा के साथ अफगान शासक के साथ हो गया कि वहां से मुग़ल आधिपत्य समाप्त करके शेरशाह उसे ग्वालियर प्रदान कर देना लेकिन इस आशा के विरुद्ध अफगान शासक द्वारा ग्वालियर पर आधिपत्य स्थापित करने के पश्चात वहां अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर दिया जिससे रामशाह को अत्यंत निराशा हुई। लेकिन इसके पश्चात भी तोमर राजा मालवा अभियान में शुजात खाँ के नेतृत्व में साथ रहा लेकिन इस सैनिक अभियान की पृष्ठ भूमि में शेरशाह का मुख्य उद्देश्य रायसेन एवं चन्देरी पर कब्जा करना था जहां तोमरों की अन्य शाखा का अधिकार था। अफगान शासक ने 1544 ई. में रायसेन के दुर्ग पर न केवल अपना अधिकार स्थापित किया बल्कि पूरनमल एवं सभी तोमरों की हत्या कर दी जिससे रामशाह को अत्यंत सन्ताप हुआ एवं उसने शेरशाह का साथ छोड़ कर पुनः चम्बल घाटियों में शरण ली।[6]

इसके पश्चात रामशाह उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करता रहा। कालिंजर आक्रमण के समय शेरशाह की आकस्मिक मृत्यु के पश्चात इस्लामशाह उसका उत्तराधिकारी बना जिसकी 1559 ई. में बंगाल के खिज्र खाँ के विरुद्ध संघर्ष में मृत्यु हो गई। इस समय ग्वालियर पर इस्लामशाह के पुत्र फिरोज़ का मामा मुरबिज़ खाँ का आधिपत्य था।[7] फिरोज़ की हत्या करके वह स्वयं आदिलशाह के नाम से शासक बन गया। उसने ग्वालियर दुर्ग इस्लामशाह के सेवक सुहैल के आधिपत्य में दे रखा था। उपयुक्त अवसर पाकर रामशाह चम्बल की घाटियों से बाहर आया एवं सेना का संग्रह करके ग्वालियर पर घेरा डाल कर लगभग दुर्ग पर अधिकार कर लिया, लेकिन इसी समय मुग़ल सेना के पहुँच जाने पर उसने घेरा उठा कर मुग़ल सेना का बहादुरी के साथ सामना किया लेकिन सुस्सजित सेना के सम्मुख उसे हार का सामना करना पड़ा।[8]

ऐसी परिस्थिति में रामशाह के सम्मुख यह क्षेत्र छोड़कर किसी अन्य जगह जाने के अतिरिक्त कोई और चारा नहीं था। उसके सम्मुख यह प्रश्न था कि कहां जाना चाहिए? वह ऐसे स्थान पर जाना चाहता था जहां जाकर वह मुग़ल सत्ता के विरुद्ध संघर्ष कर सके। इसलिए उसने अपने क्षेत्र से दूर स्थित मेवाड़ को चुना। यहां यह प्रश्न उठता है कि उसने मेवाड़ की ओर जाने का निर्णय क्यों लिया? जबकि ग्वालियर के समीप नवीन उभरता बुंदेला राज्य था जिसकी राजधानी ओरछा थी। अगर उसने वहां जाने का निर्णय लिया होता तो बुंदेला शासकों की शक्ति में भी बढ़ोतरी होती। ग्वालियर का निष्कासित शासक उस क्षेत्र में जाना चाहता था जहां के शासकों का संघर्षपूर्ण इतिहास रहा हो। उसकी दृष्टि में मेवाड़ को छोड़ कर ऐसा अन्य

कोई राज्य नहीं था जिसका मुग़लों के अतिरिक्त पड़ौसी राज्यों से भी संघर्ष का लम्बा इतिहास रहा है जबकि बुन्देला शासकों का ऐसा कोई गौरवशाली अध्याय नहीं रहा था। बाबर के विरुद्ध राणा सांगा के संघर्ष का स्मरणीय इतिहास रहा है। हालांकि सिसोदिया शासक को पराजय का सामना करना पड़ा था लेकिन उसकी प्रशंसा विरोधी बाबर को भी करनी पड़ी थी।[9] इसके अतिरिक्त 1568 ई. में मुग़ल एवं सिसोदिया सेना के मध्य चित्तौड़ का इतिहास प्रसिद्ध युद्ध हुआ था जिसमें मुग़ल शासक अकबर को संघर्षपूर्ण सामना करना पड़ा था। चित्तौड़ की विजय अकबर के लिए एक महान विजय थी। इसीलिए इस विजय की खुशी में उसने 'फतहनामा' जारी किया था।

उपर्युक्त कारणों के कारण रामशाह तोमर ने सम्भवतः मेवाड़ में शरण लेने का निर्णय लिया होगा। उस समय मेवाड़ का शासक राणा उदयसिंह था जिसने ग्वालियर के निष्कासित शासक को न केवल शरण दी बल्कि उसे अपने पदानुकूल सम्मान दिया तथा उसे बारीदासोर की जागीर प्रदान की। इसके अतिरिक्त यह भी माना जाता है कि महाराणा ने अपनी पुत्री का विवाह रामशाह के ज्येष्ठ राजकुमार शालिवाहन के साथ विवाह भी किया।[10]

अकबर ने जब चित्तौड़ पर आक्रमण किया उस समय अपने सरदारों की सलाह पर राणा उदयसिंह ने दुर्ग परिसर का त्याग कर अपनी विशाल सेना को जयमल मेड़तिया एवं पत्ता सिसोदिया के सेनापतित्व में वहां छोड़ दिया। ऐसी मान्यता है कि चित्तौड़ घेरे के समय राजा रामशाह भी मुग़ल सेना के विरुद्ध लड़ा था।[11] हरिहर निवास द्विवेदी के उपर्युक्त कथन की पुष्टि गोगूंदा की ख्यात से भी होती है।[12]

मेवाड़ के स्रोतों में 1572 ई. में राणा उदयसिंह के अन्तिम संस्कार के समय राजा रामशाह तंवर (तोमर शब्द का तंवर के रूप में राजस्थानीकरण) की उपस्थिति को दर्शाया गया है। स्रोतों के अनुसार सर्वप्रथम उसने ही राजकुमार जगमाल की अनुपस्थिति के बारे में राजकुमार सगर से पूछताछ की। प्रत्युत्तर में उसने महाराणा द्वारा जगमाल को अपना उत्तराधिकारी बनाने के निर्णय की जानकारी दी। उसने ही प्रताप के मामा मानसिंह सोनगरा से परामर्श किया। सोनगरा ने राणा चूंडा के पौत्रों रावत कृष्णदास एवं रावत सांगा से इस सम्बन्ध में जानकारी चाही। उपस्थित सभी सरदारों के मध्य इस बात को लेकर विचार–विमर्श हुआ कि ज्येष्ठ पुत्र होने के बावजूद प्रताप को किस दोष के कारण उत्तराधिकार से वंचित किया गया? गहन सोच विचार के पश्चात सरदारों के मध्य यह निर्णय हुआ कि वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों में प्रताप को राज्य की बागडोर देनी चाहिए। परिणामतः गोगूंदा के महलों में राजसिंहासन पर बैठे राजकुमार जगमाल को सरदारों ने वहां से उतार कर

राजगद्दी पर प्रताप को आसीन कर दिया। इस सम्पूर्ण मामले में ग्वालियर के राजा रामशाह तंवर की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही थी। उसी ने सबसे पहले इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया एवं तत्काल उसने प्रताप के मामा मानसिंह सोनगरा एवं सिसोदिया सरदारों से बात की एवं उन्हें उत्तराधिकार की परम्परा का स्मरण करवाया था। इस सम्पूर्ण मामले से यह उजागर हो जाता है कि राजा रामशाह तंवर (तोमर) को मेवाड़ राजवंश के प्रतिष्ठित सरदारों के समतुल्य स्थान प्राप्त था एवं उसकी राय का काफी महत्त्व था। ऐसा राणा उदयसिंह द्वारा राजदरबार में ग्वालियर के पूर्व तोमर शासक को सम्मानपूर्ण स्थान दिए जाने के कारण से ही सम्भव हो सका था। इसी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि दिवंगत महाराणा द्वारा ग्वालियर के पूर्व शासक को जागीर में बहुत बड़ा क्षेत्र प्रदान करके अन्य सरदारों के समकक्ष उसकी हैसियत का निर्माण किया होगा। ताकि उक्त जागीर की आय से वह अपने परिवार एवं अपने सैन्य लवाजमे के खर्च का निर्वाह कर सके।

18 जून, 1576 ई. में मेवाड़ की सरज़मी पर हल्दीघाटी अर्थात् खमणोर में सिसोदिया एवं मुगलों के मध्य लड़ा गया युद्ध दूरगामी परिणाम वाला था। दोनों पक्षों की सेना का स्वरूप धर्म आधारित न होकर मिश्रित ;ब्वउचवेपजद्ध था। महाराणा की सेना में सिसोदिओं की विभिन्न खांपों के अतिरिक्त मारवाड़ के राठौड़, सोनगरा चौहान, झाला, ग्वालियर के तोमर (तँवर), अफगान, जालोर के बिहारी पठान, पुरोहित, मेहता, चारण एवं भील आदि सम्मिलित थे।13 दूसरी ओर मुगल सेना में मध्य एशिया के उज़बेग, कज़ाक एवं बदख्शी एवं भारतीय मुस्लिम जिसमें बारहा के सैय्यद, फतेहपुर सीकरी के शैखजादा आदि सम्मिलित थे जबकि राजपूतों में मानसिंह कछवाहा की बिरादरी एवं उसके अन्य अनुयायी युद्ध में भागीदारी निभा रहे थे।[14] दोनों ओर से सैन्यबलों में हिन्दू–मुसलमानों के अतिरिक्त महाराणा की सेना में हिन्दू–समाज की विभिन्न जातियों के साथ–साथ बड़ी संख्या में भीलों की भागीदारी भी थी। चूंकि मुगल सैन्यबलों के बारे में विस्तार से साक्ष्यों की अनुपलब्धता के कारण अधिक कुछ कह पाना मुश्किल है। लेकिन सैन्यबलों के मिश्रित स्वरूप के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह हिन्दू–मुस्लिम युद्ध निश्चित ही नहीं था एवं न ही हिन्दू एवं इस्लाम धर्मों के मध्य था क्योंकि किसी भी ओर से कोई धार्मिक नारे यह लगाने के प्रमाण नहीं मिलते। मेवाड़ सेना के एक भाग का नेतृत्व हकीम खाँ सूर के कन्धों पर था जबकि मुगल सेना की सम्पूर्ण कमान आमेर के कछवाहा राजकुमार मानसिंह के हाथों में थी। इससे एक बात स्पष्टतः उभरती है कि हकीम खाँ सूर एवं उसके अफगान सैनिकों के हाथों सेना के एक हिस्से की बागडोर सम्भालते समय उनके इस्लाम धर्म के अनुयायी होने के कारण मेवाड़ के युवा शासक

महाराणा प्रताप के मस्तिष्क में उनके प्रति किसी प्रकार का संदेह निश्चित ही नहीं था। अगर उसे ऐसा तनिक भी संशय होता तो वह निश्चित ही सेना की कमान उसके सुपुर्द न करता। ठीक इसी प्रकार की भावना मुग़ल बादशाह अकबर के दिमाग में भी थी जिसके कारण से ही उसने आमेर के राजकुमार मानसिंह कछवाहा को मुग़ल सेना की सम्पूर्ण कमान सौंप दी थी। मेवाड़ के विरुद्ध मुग़ल सैनिक अभियान का मुख्य उद्देश्य राजनीतिक एवं साम्राज्य विस्तार था। राजस्थान की लगभग सभी राजपूत रियासतों ने मुग़ल आधिपत्य को स्वीकार कर लिया था जबकि मेवाड़ ऐसा न करने पर अडिग था। अकबर को प्रताप का रुख असहनीय हो रहा था इसलिए वह उसे पददलित करके रौंद डालना चाहता था। दूसरी ओर सिसोदिया नायक अपने वंश के गौरव एवं गरिमा की रक्षा हेतु प्रतिबद्ध एवं कृतसंकल्प था। मेवाड़ को वह मुग़लों के हाथों में नहीं सौंपना चाहता था क्योंकि यह सिसोदिया वंश की प्रतिष्ठा से जुड़ा प्रश्न था। मेवाड़ एवं अपने वंश के स्वाभिमान एवं आत्म सम्मान की रक्षा के लिए महाराणा प्रताप अकबर जैसे शक्तिशाली शत्रु के विरुद्ध युद्ध के लिए तत्पर था।

रामशाह तंवर की हल्दीघाटी युद्ध में भूमिका :

इस युद्ध में ग्वालियर के पूर्व शासक रामशाह तँवर (तोमर) अपने तीन पुत्रों एवं अपनी बिरादरी के सैन्य बल के साथ उपस्थित था। उसको दक्षिण पार्श्व में सामरिक महत्त्व की स्थिति पर नियुक्त किया गया था।[15] जिससे युद्ध में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका का अनुमान लगाया जा सकता है। आधुनिक काल में सर्वप्रथम रामशाह के बारे में जेम्स टॉड ने लिखा कि हल्दीघाटी के युद्ध में राणा के पांच सौ सैनिकों के अतिरिक्त ग्वालियर का निष्कासित राजा रामशाह अपने पुत्र खांडेराव के साथ उपस्थित था।[16] यद्यपि उसने रामशाह के पुत्र का नाम गलत अंकित किया है लेकिन आगे एक महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर संकेत करता है कि वह अपने पुत्रों के अतिरिक्त अपनी बिरादरी के साढ़े तीन सौ तुंवरवंशी राजपूत सैनिकों के साथ युद्ध क्षेत्र में वीरगति को प्राप्त हुआ। उसके मेवाड़ आने का कारण उसके पैतृक राज्य ग्वालियर पर अकबर द्वारा आधिपत्य कर लेना था इसलिए इसका प्रतिशोध लेने हेतु उसने अपने परिवार एवं बिरादरी के साथ मेवाड़ में शरण ली। राणा उदयसिंह ने उसके एवं उसके सैनिकों के निर्वहन के लिए आठ सौ रुपए प्रतिदिन के निर्धारित किए।[17] टॉड की पादटिप्पणी में संकेतित राशि का साक्ष्य ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसकी पुष्टि एक राजस्थानी दस्तावेज से भी होती है।[18]

उद्धृत दस्तावेज से कुछ तथ्य उभर कर हमारे सम्मुख आते हैं जिनमें दो प्रत्यक्ष है : प्रथम, राजा रामशाह तंवर को महाराणा प्रताप की सेवा में दर्शाना

जबकि द्वितीय ग्वालियर के पूर्व शासक एवं मेवाड़ के अन्य सरदारों का हल्दीघाटी संग्राम में मारा जाना। दस्तावेज में दर्ज युद्ध का महिना गलत है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात जो टॉड अपने ग्रन्थ में दर्शाता है वह यह कि हल्दीघाटी युद्ध में रामशाह अपने पुत्रों के साथ–साथ अपने साढ़े तीन सौ तंवर सैनिकों के साथ वीरगति को प्राप्त करता है। इस तथ्य की पुष्टि किसी समकालीन एवं परवर्ती स्रोत से नहीं होती।[19] लेकिन उपर्युक्त उद्धृत राजस्थानी दस्तावेज टॉड द्वारा उपलब्ध कराए गए साक्ष्य को व्याख्यायित करने में हमारी सहायता करता है। महाराणा प्रताप एवं अकबर समकालीन थे इसलिए इनके समय के साक्ष्यों की पारस्परिक तुलना करना अनुचित नहीं होगा। मुग़ल काल के इस दौर में अधिकारियों की तनख्वाह उनके मन्सब के अनुसार निर्धारित की जाती थी। मन्सब एक प्रकार संख्यात्मक पद होता था जिसकी शुरूआत के साक्ष्य 1573–74 ई. से मिलने प्रारम्भ होते हैं।[20] मन्सब–धारक को मुग़ल साम्राज्य में मन्सबदार कहा जाता था जिनकी तनख्वाह की गणना उनके पद के अनुसार मासिक रूप में करके भुगतान किया जाता था।[21] शीरीं मूसवी ने अपने ग्रन्थ में विभिन्न श्रेणियों के मन्सबदारों की तनख्वाह उनके मन्सब के अनुसार प्रतिमाह के हिसाब से रुपयों में दर्ज की है जिसको निम्न सारणी में दर्शाया है जिसके कुछ अंश नीचे दिए गए हैं :

सारणी : मन्सबदारों की तनख्वाह

मंसब	मासिक तनख्वाह (रुपयों में)			जानवरों एवं गाड़ियों के लिए भत्ता (रुपयों में)
	I	II	III	
10,000	60,000	–	–	20,849
8,000	50,000	–	–	16,992.75
7,000	45,000	–	–	14,643.63
5,000	30,000	29,000	28,000	10,703.50
4,500	26,000	25,800	25,700	9,446.88
4,000	22,000	21,800	21,600	8,422.88
3,500	18,600	18,400	18,300	7,702.13
3,000	17,000	16,800	16,700	6,568.25

स्रोत : शीरीं मूसवी, द इकानामी ऑफ द मुगल एम्पायर, पृ. 211

शीरीं मूसवी आगे मन्सबदारों के द्वारा सैनिकों की तनख्वाह के बारे में भी बताती है जो मन्सबदार जितने घोड़े रखता था उसी के अनुसार सैनिकों को पगार मिलती थी जैसे कि तीन घोड़े रखने वालों को 1000 दाम, दो घोड़े वालों को 800 दाम एवं 600 दाम एक घोड़े के साथ सेवा देने वाले को मिलते थे।[22]

अकबर के काल के मन्सबदारों के तनख्वाह के दावों के अनुसार जिस प्रकार उनके पद का निर्धारण किया जाता था ठीक उसी प्रकार रामशाह तंवर के स्तर का अनुमान भी लगाया जा सकता है। ग्वालियर के शासक को 800 रुपए प्रतिदिन निर्वाह की दर से 24,000 रु. (800 × 30 = 24,000) रुपए प्रतिमाह मिलते थे। इस दृष्टि से अकबर के समय के 4,500 मन्सब के पद के समतुल्य रामशाह तंवर का पद ठहरता है। इससे महाराणा प्रताप के समय में ग्वालियर के शासक की महत्त्वपूर्ण स्थिति ज्ञात होती है। अपनी इसी स्थिति के कारण उसने सिसोदिया नायक के राज्यरोहण में अहम भूमिका भी निभाई थी। इससे प्रताप के दरबार में ग्वालियर शासक की स्थिति सिसोदिया सरदारों के समकक्ष होने की पुष्टि होती है।

उपरोक्त गणना के आधार पर रामशाह तंवर के सैन्यबल में (पुत्रों के अतिरिक्त) सैनिकों का अनुमान लगाया जा सकता है। अकबर के काल में एक सैनिक को घोड़े सहित 600 दाम अर्थात् 15 रु. प्रतिमाह पगार मिलती थी। रामशाह तंवर को मिलने वाले 24,000 रु. को 15 रु. से भाग देने पर 1,600 आते हैं। इसीलिए इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि अकबरकालीन मानदंडों के अनुसार रामशाह की सेना में लगभग 1,600 सैनिक अपनी बिरादरी के थे। इस आंकड़े को अस्वीकार करने का कोई औचित्य समझ में नहीं आता।

अकबर के काल में सैनिकों की तनख्वाह निश्चित ही उच्च स्केल (मानदंड) पर निर्धारित की जाती रही होगी। इसके लिए घोड़े की नस्ल आदि को भी ध्यान में रखकर तनख्वाह का निर्धारण किया जाता था। अलग–अलग नस्ल के घोड़ों की दर भिन्न हुआ करती थी एवं घोड़ों को दाग प्रक्रिया से गुजरने के पश्चात् दर का निर्धारण किया जाता था। रामशाह तंवर के पास भी निश्चित ही अच्छे घोड़े रहें होंगे जो मेवाड़ी या किसी अन्य नस्ल के रहे होंगे। इसके आधार पर ग्वालियर के शासक के द्वारा अपने सैनिकों को तनख्वाह कम दी जाती रही होगी क्योंकि वह एक मिशन या उद्देश्य के लिए मेवाड़ आया था। अपने खोये हुवे राज्य की पीड़ा एवं उस पर आधिपत्य करने वाले से बदला लेना ही उसका प्रमुख उद्देश्य था। इसलिए उसके इस उद्देश्य में उसकी बिरादरी के सैनिक भी उसका साथ निभाने के लिए प्रतिबद्ध एवं

कृत संकल्पित थे। इस आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उसके साथ लगभग दो हजार सैनिक रहे होंगे। ऐसा न मानने के लिए हमारे पास कोई ठोस आधार नज़र नहीं आता। जबकि सज्जनसिंह राणावत ने अपने एक आलेख में बिना किसी उद्धरण के लिखा कि "रामशाह की अपनी लगभग 500 तंवरों की सेना में से एक भी वीर नहीं बचा" जिसका निहितार्थ है कि उसकी सेना में कुल पांच सौ सैनिक ही थे।[23] जबकि टॉड के अनुसार यह संख्या 350 थी।[24]

रामशाह की तंवर सेना की संख्या को लेकर कोई भी प्रश्न उठा सकता है कि अगर उसके साथ दो हजार सैनिक थे तो महाराणा की सेना में कितने सैनिक थे ? निश्चित ही सिसोदिया शासक की सेना की संख्या काफी अधिक थी जिसका कारण अन्य सहयोगियों की सेना का सम्मिलित होना था। लेकिन ग्वालियर के पूर्व शासक की सेना की संख्या का अनुमान सही प्रतीत होता है क्योंकि इस सैन्य बल के आधार पर ही ग्वालियर में मुग़ल सेना से मोर्चा ले सका था। दूसरी ओर सिसोदिया नायक की सेना की संख्या के बारे में अधिकांश स्रोत मौन हैं। बदायूंनी इस युद्ध क्षेत्र में उपस्थित था जिसके अनुसार राणा कीका की सेना में 3,000 घुड़सवार सैनिक थे।[25] राजस्थान का अबुल फज़ल मुंहता नैणसी 9,000 तथा 10,000 के मध्य सैनिकों का बल महाराणा प्रताप के सैनिक बेड़े में होना दर्शाता है।[26] एक इतिहासकार बिना किसी आधार के प्रताप की सेना में 3,000 घुड़सवार, 2,000 पैदल सैनिक, 100 हाथी तथा 100 जानमाल–असबाब ढोने वाले व रणवाद्य तूर्य, रणसिंघे, नक्कारादि बजाने वाले एवं मुगल सेना की संख्या इससे दुगुनी बताता है।[27] मेरी राय में सिसोदिया सेना की कुल संख्या की सही जानकारी युद्ध में सम्मिलित अन्य सहयोगियों की सेना के आकलन के पश्चात ही मिल पाने की सम्भावना है।

इस दृष्टि से राजस्थानी दस्तावेज में उपलब्ध साक्ष्य का महत्त्व बढ़ जाता है। दस्तावेज की एक पंक्ति पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है वह यह कि "राजा रामशाह तुंवर गुआलेर रौ धणी महाराणा जी श्री प्रतापसिंघजी कनै था : सो विषा माहे रुपहीआ 800 रोज 1 तठै कांम आया...।" इस पंक्ति में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य अन्तर्निहित है वह यह कि विषा मांहे अर्थात् युद्ध के समय ग्वालियर का रामशाह तंवर प्रताप की सेना में अपने पुत्रों एवं अपनी बिरादरी के सैनिकों के साथ सिसोदिया नायक के राज्यारोहण से लेकर हल्दीघाटी युद्ध के मैदान तक साथ था इसलिए उस समय में उसके सैनिकों एवं स्वयं के निर्वाह के लिए 800 रु. प्रतिदिन के हिसाब से निश्चित कर दिये थे। इसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सिसोदिया वंश के साथ उसके सम्बन्धों की शुरूआत राणा उदयसिंह के काल से हुई थी।

इस नकद भुगतान के अतिरिक्त, महाराणा ने उसके जीवन निर्वाह के निमित्त वारां–दसोर नामक स्थान भी जागीर में प्रदान करके उसे अपने सरदारों के समकक्ष स्थान प्रदान किया था।[28]

राणा उदयसिंह द्वारा ग्वालियर के रामशाह तंवर को जागीर प्रदान करने की पुष्टि अमरकाव्यम में निम्न श्लोक उपलब्ध होता है :

ग्वालेरिदुर्गनाथय रामशाहिमही भुजे।
वारां दसोर दत्वा रस्क्षात्मसमं नृपः।।[29]

उपर्युक्त श्लोक के भावार्थानुसार ग्वालियर दुर्ग के स्वामी रामशाह को वारां–दसोर देकर अपने समतुल्य पद प्रदान किया। उपर्युक्त श्लोक से पूर्व में राजस्थानी दस्तावेज के आधार पर लगाए गए अनुमान की पुष्टि होती है।

'अमरकाव्यम' में जिस प्रकार से वारां दसोर की जागीर का वर्णन किया है उससे यह ज्ञात नहीं होता है कि यह दो भिन्न स्थान हैं या एक। श्यामलदास ने इस शब्द को एक स्थान मानते हुवे 'बारांदसोद' को संयुक्त रूप से लिख दिया है।[30] ओझा ने भी उनका अनुसरण किया है।[31] राणा उदयसिंह एवं महाराणा प्रताप के काल के दस्तावेज उपलब्ध नहीं है। महाराणा राजसिंह के समय के सम्पूर्ण परगनों के सभी गांवों की बहियां उपलब्ध हैं जिनका सम्पादन एवं प्रकाशन दो अलग ग्रन्थों के रूप में हो चुका है।[32] परगना बही में बारां नामक एक परगना है जिसमें कुल 120 गांव है। उनमें से 75 गांव खालसा के एवं 45 गांव धार्मिक अनुदान में ब्राह्मणों, चारणों एवं भाटों को प्रदान किए हुए हैं। यह बारां नामक सम्पूर्ण परगना या फिर धार्मिक अनुदान के गांवों को छोड़कर खालसा के गांव सम्भवतः राजा रामशाह तंवर की जागीर में थे जिनकी रेख (अनुमानित आय) 79,064 रु. थी। अगर सम्पूर्ण परगना जागीर में था तो उसकी सम्पूर्ण रेख 1,09,184 रु. होती है। यह अनुमान कि ग्वालियर जैसे विशाल राज्य के पदच्युत राजा को मेवाड़ के राणा उदयसिंह द्वारा एक सौ बीस गांवों का सम्पूर्ण परगना जागीर में प्रदान करना उचित प्रतीत होता है। फिर अमरकाव्यम के श्लोक की पंक्ति कि महाराणा ने रामशाह तंवर को जागीर देकर अपने समकक्ष रखा, सही अर्थों में अर्थवान या सार्थक बनती है। इससे इस बात की पुष्टि हो जाती है कि राजा रामशाह तंवर को महाराणा प्रताप द्वारा अपने पिताश्री द्वारा प्रदत्त बारांदसोद की जागीर के अतिरिक्त 800 रु. दैनिक उसके एवं उसके सैनिकों के व्यय हेतु निर्धारित किया जाना प्रतीत होता है।

हल्दीघाटी युद्ध में ग्वालियर के शासक अपने तीन पुत्रों सहित वीरगति को प्राप्त हुआ।[33] इस प्रकार तंवर राजपरिवार ने मेवाड़ के सिसोदिया वंश के लिए अपने सम्पूर्ण व्यस्क परिवार को न्यौछावर कर दिया। राणा उदयसिंह ने

रामशाह तंवर को न केवल संरक्षण प्रदान किया बल्कि ग्वालियर के राजघराने के महाराजा मानसिंह तोमर की प्रतिष्ठा के अनुकूल उसके उत्तराधिकारी को सम्मान एवं पद प्रदान किया।

हल्दीघाटी युद्ध के पश्चात इस परिवार का क्या हुआ यह सब इतिहास के गर्त में है। कहा जाता है कि रामशाह के बड़े पुत्र शालिवाहन के श्यामसिंह एवं मित्रसेन नामक दो पुत्र थे जो कुछ समय तक तो प्रताप की सेवा में रहे,[34] लेकिन माना जाता है कि बाद में अकबर की सेवा में चले गये जिसकी पुष्टि किसी भी फारसी अथवा देशज स्रोत से नहीं होती।

राजा रामशाह तंवर एवं उनके पुत्रों की वीरगति के पश्चात उनके किसी एक वंशज के बारे में जानकारी उपलब्ध होती है। महाराणा अमरसिंह द्वितीय के काल की वि.सं. 1761/ई. 1704 की पट्टा बही से ज्ञात होता है कि किसी कुंवर खड़गसेन को 3,000 रु. रेख की जागीर महाराणा ने प्रदान कर रखी थी जो विजयसिंह का पुत्र था।[35] यह रामशाह की पांचवी पीढ़ी में था। विजयसिंह तंवर ग्वालियर शासक के पुत्र मित्रसेन के उत्तराधिकारियों में था।36 इसका तात्पर्य है कि इस वंश के कुछ सदस्य मेवाड़ राज्य की सेवा में अभी भी थे।

हल्दीघाटी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए योद्धाओं के नामों का संकलन करने का सराहनीय प्रयास हुआ है।[37] हमें विश्वास है कि यह प्रक्रिया भविष्य में भी जारी रहेगी। इस युद्ध में अपने जीवन को न्यौछावर करने वाले योद्धाओं की स्मृति में रक्त तलाई में छतरियां एवं कब्र स्थित है। एक छतरी की स्थापत्य शैली के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इसका निर्माण युद्ध के तत्काल पश्चात हुआ होगा। इस छतरी का छायाचित्र निम्न है :

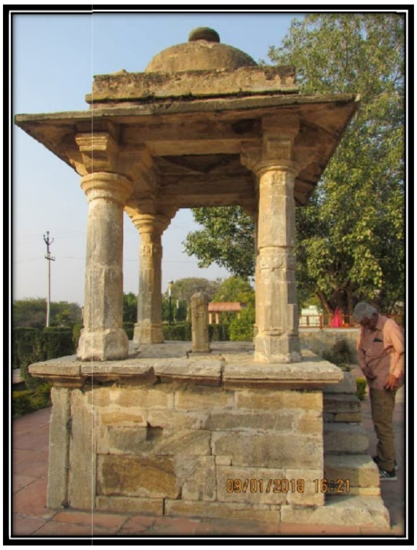

रक्त तलाई में स्थित झाला बीदा को समर्पित स्मारक

इसी प्रकार इसी परिप्रक्षेय में दो और छतरियां निर्मित हैं जो एक जिनका निर्माण महाराणा कर्णसिंह ने अपने काल में करवाया था। इन का श्रेय डॉ. रतनचन्द्र अग्रवाल, भूतपूर्व निदेशक, राजस्थान पुरातत्व एवं दूसरी से जुड़ी हैं छतरियों की खोज सर्वेक्षण विभाग को जाता है। उन्होंने इनकी खोज 1956 ई. में की थी।[38] इन दो में से एक छतरी पर शिलालेख उत्कीर्ण है जिसका छायाचित्र निम्न है :

शिलालेख का छायाचित्र

इस शिलालेख से स्पष्ट है कि इसका निर्माण वि. सं. 1681 / 1624 ई. में महाराणा कर्णसिंह द्वारा करवाया गया था इसका लिप्यन्तरण नीचे दिया जा रहा है :

1. संमत 1681 वरषे
2. रना करणसींघ जी
3. ने कराई छतरी
4. गलेरक रज की
5. रजरमस बेटो
6. सलरहण जरी
7. सीलवट
8. जत (जाति) मदीजत (बतालीम?) 9. कम कीथो

हिन्दी का भावार्थ – राणा करणसिंह जी ने वि.सं. 1681 (ई. 1624) में ग्वालियर के राजा रामशाह एवं बेटे शालिवाहन की छतरी बनाई। सिलावट जाति के बतालीम ने कमठाने अर्थात निर्माण का कार्य किया।

मेवाड़ महाराणा कर्णसिंह ने इन छतरियों का निर्माण करवा कर मेवाड़ राजवंश को भविष्य में आरोपित किए जाने वाले उस आक्षेप से भी मुक्त कर दिया कि राणा सांगा के वंशज विजातीय एवं दूसरे राज्य के शासकों द्वारा मेवाड़ की आन की रक्षा के लिए प्राण न्यौछावर करने वालों को किसी प्रकार का सम्मान नहीं देते एवं उनको स्मृति–पटल से भी ओझल कर देते हैं। इस दृष्टि से इन स्मारकों का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है एवं महाराणा के वंश गौरव में श्रीवृद्धि करने वाला है।

सिसोदिया एवं मुग़ल सेना के मध्य 18 जून 1576 के दिन हुवे हल्दीघाटी (खमणोर) के युद्ध में अनेक सिसोदिया एवं गैर–सिसोदिया सेनानायकों ने अपनी सैन्य बिरादरी के साथ उल्लेखनीय भागीदारी निभाई थी जिनमें ग्वालियर के पूर्व शासक रामशाह तंवर की भी महत्वपूर्ण भूमिका थी। उपरोक्त आलेख में इस युद्ध में उसके सैन्य योगदान के आकलन का प्रयास किया गया है। अन्तःसाक्ष्यों के विश्लेषण एवं समकालीन मुगल़ स्रोतों के साथ तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा तंवर बिरादरी के सैनिकों की कुल संख्या का अनुमान लगाने का प्रयास किया गया है। तवंर शासक का महाराणा उदयसिहं एवं प्रताप के दरबार में उसके सम्मान का आधार उसका सैन्यबल था। इसी सैन्यबल के कारण महाराणा उदयसिंह ने न केवल उसको दैनिक भत्ता एवं जागीर प्रदान किया बल्कि अपनी पुत्री का विवाह उसके पुत्र के साथ करके सम्मान प्रदान किया। इसी को ध्यान में रख कर महाराणा कर्णसिंह ने हल्दीघाटी युद्ध क्षेत्र के मध्य रामशाह तंवर एवं उसके पुत्रों की स्मृति को चिरस्थाई बनाने हेतु छतरियों का निर्माण करवाया।

संदर्भ

1. महाराणा प्रताप एण्ड हिज टाईम्स, स. गोपीनाथ शर्मा एम. एन. माथुर महाराणा प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर।
2. चूंकि मुझे कहीं से इसकी कोई जानकारी उपलब्ध नहीं हुई इसलिए मैंने विकिपिडिया से उद्धृत किया है।
3. के.आर. मलकानी, द पालिटिक्स ऑफ हिन्दू मुस्लिम रिलेशन्स, हर आनन्द पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1993
4. दृष्टव्य रामशाह तंवर का अध्याय।

5. सर जादुनाथ सरकार, मिल्टरी हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, ओरियेन्ट लोंग मेन, नई दिल्ली।
6. महाराणा राजसिंह पट्टा बही – पट्टेदारां री विगत, सं. हुकमसिंह भाटी, प्रथम, पृ. 162
7. उपर्युक्त, पृ. 188–89

1. हरिहर निवास द्विवेदी, तोमरों का इतिहास, ग्वालियर के तोमर, द्वितीय भाग, ग्वालियर, 1976, पृ.130–31
2. वही, पृ. 155–65
3. मानसिंह के भवनों की प्रशंसा बाबर ने भी की है दृष्टव्य, बाबर कृत, बाबरनामा, अनु. सैयिद अतहर अब्बास रिज़वी, अलीगढ़, 1960, पृ. 275; तोमरों का इतिहास, उपर्युक्त पृ. 166
4. तोमरों का इतिहास, उपर्युक्त पृ. 176
5. उपर्युक्त, पृ. 178
6. अबुल फज़ल, अकबरनामा, अनु. बेवरीज, प्रथम पृ. 399 एवं हरिहर निवास द्विवेदी, उपुर्यक्त, पृ. 194–96
7. इस्लामशाह की मृत्यु के पश्चात उसका अवयस्क पुत्र फिरोज़ ग्वालियर का शासक बना लेकिन शासक वास्तव में उसके मामा मुबरिज़ खाँ के हाथ में था। मामा ने भान्जे की हत्या के पश्चात आदिलशाह के नाम से शासक बन गया। उसकी पटना में मृत्यु हो गई। उसने ग्वालियर इस्लामशाह के दास सुहैल को दे रखा था। तुलनीय हरिहर निवास द्विवेदी, पूर्वोक्त, पृ. 196; अबुल फज़ल ने इस्लामशाह के पुत्र फिरोज़ खाँ का जिक्र नहीं किया है बल्कि मुबरिज़ खाँ के आधिपत्य में ग्वालियर का होना दर्शाया है जिसकी तरफ से ग्वालियर पर भील खान शासन कर रहा था जो इस्लामशाह का दास था, अकबरनामा, भाग–2, पृ. 88 जबकि फरिश्ता उस दास का नाम सुहैल लिखता है, पाद टिप्पणी अकबरनामा, उपर्युक्त।
8. अबुल फज़ल लिखता है कि मुग़ल कमाण्डर क़िया ख़ान का मुकाबला के लिए रामशाह दुर्ग से बाहर आया। उसने बहादुरी से युद्ध किया लेकिन मुग़ल सेनापति की मजबूत स्थिति के सामने उसे हार माननी पड़ी। बहुत से लोगों को उसने मौत के घाट उतार दिया एवं दुर्ग पर अपना कब्जा कर लिया, अकबरनामा, द्वितीय, पृ. 88
9. बाबर, बाबरनामा/तुज़ुके बाबरी, उपरोक्त, पृ. 227
10. महेन्द्र सिंह 'खेतासर', महाराणा प्रताप के प्रमुख सहयोगी राजा रामशाह तंवर एवं ग्वालियर, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश शोध केन्द्र, जोधपुर, 2014, पृ. 65–66
11. तोमरों का इतिहास, उपर्युक्त, पृ. 244
12. गोगूंदा की ख्यात, सं. डॉरु हुकमसिंह भाटी, उदयपुर, 1997, पृ. 3–4; डॉ. महेन्द्र सिंह 'खेतासर', जोधपुर, 2014, पृ. 65

13. श्यामलदास ने महाराणा की सेना में अलग–अलग सेनानायकों एवं भागीदारों का विस्तार से वर्णन किया है दृष्टव्य, वीरविनोद, द्वितीय भाग, महाराणा मेवाड़ हिस्टोरिकल पब्लिकेशन्स ट्रस्ट उदयपुर एवं राजस्थानी ग्रन्थागार, सोजती गेट, जोधपुर, चतुर्थ संस्करण 2017, पृ. 151; बांकीदास ने तो युद्ध में मारे गए योद्धाओं के नाम मय उनकी साख अथवा जाति अंकित की है। इन नामों में ग्वालियर के रामशाह तंवर अपने तीन पुत्रों सहित, मेड़तिया रामदास जैमलोत अपने नौ अनुयायियों के साथ, सोनगरा मानसिंह ग्यारह सैनिकों के साथ आदि सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त राठौड़, सींधल, चौहान, वागड़िया एवं खाबड़िया आदि राजपूत शाखाओं के लोग इस सूची में थे दृष्टव्य, बांकीदास री ख्यात, सं. नरोत्तमदास स्वामी, राजस्थान पुरातत्त्वान्वेषण मन्दिर, जयपुर 1956, पृ. 92–93
14. अबुल फज़ल, अकबरनामा, अनुवाद एच. बेवरीज, भाग–3, लो प्राईस पब्लिकेशन्स, दिल्ली 2013, पृ. 244–45, अब्दुल कादिर बदायूंनी, मुन्तखब–उत–तवारीख, रेकिंग द्वारा अंग्रेजी अनुवाद, भाग–2, अटलान्टिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रण, 1990, पृ. 236;
15. अबुल फज़ल के वर्णन से भी सैन्य संयोजन की जानकारी उपलब्ध होती है। वह लिखता है कि राणा स्वयं केन्द्र में था जबकि ग्वालियर के रामशाह तंवर दक्षिण की कमान पर नियुक्त था। विस्तार के लिए दृष्टव्य, अकबरनामा, भाग – 3, पृ. 244–45
16. जेम्स टॉड, राजस्थान का पुरातत्व एवं इतिहास (हिन्दी अनुवाद), प्रथम भाग, डॉ. ध्रुव भट्टाचार्य, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, प्रथम संस्करण, 2015, पृ. 357, श्रीराम शर्मा, महाराणा प्रताप, डी. ए. वी. कॉलेज, लाहोर (डी. ए. वी. कॉलेज, हिस्टोरिकल मोनोग्राफ्स नं. 1) प्रकाशन वर्ष नहीं, पृ. 60 एवं 75; हरिहरनिवास द्विवेदी, ग्वालियर के तोमर, विद्या मन्दिर प्रकाशन, ग्वालियर, प्रथम संस्करण, 1996, पृ. 194–97; महेन्द्रसिंह 'खेतासर', महाराणा प्रताप के प्रमुख सहयोगी – राजा रामशाह तंवर, महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश, शोध केन्द्र, जोधपुर, 2014, पृ. 70–77
17. टॉड, उपर्युक्त, पृ. 357 एवं पाद टिप्पणी संख्या 21, पृ. 367
18. टॉड के कथन की पुष्टि एक हस्तलिखित राजस्थानी दस्तावेज से होती है जो सम्भवतः पूर्वकाल का है। मूल दस्तावजे निम्न है –

    राजा रामसाह तुंअर गुआलरे रौ धणी महाराणाजी श्री प्रतापसिंघजी कनै था : सो विषा माहे रुपहीआ 800 रोज 1 तठै काम आयाः स. 1632 श्रावण वदि 7 राणौ प्रतापसीघ कछवाहो मानसिंघ सु वेढ़ तिण माहे कांम आयाः सोनिगरौ मोनसीघ अषैराजोत 1 राठौड़ रामदास जैतमालोत 2 राजा रामसाह ग्वालरे रौ धणी 3 डोडीयो भीम सांडावत 4 पड़िहार सेढू 5 सांदू रांमो धरमावत 6

    उपर्युक्त उद्धरण का भावार्थ यह है कि ग्वालियर का शासक महाराणा प्रतापसिंघजी की सेवा में था। संकट में उसे प्रतिरोज 800 रुपए मिलते थे जो

युद्ध में मृत्यु को प्राप्त हुआ। वि.सं. 1632/ई. 1575 के सावन महिने की कृष्णपक्ष की सप्तमी को राणा प्रतापसिंह एवं मानसिंह कछवाहा के मध्य युद्ध में निम्न लोग मारे गए : 1. सोनगरा मानसिंह अखेराजोत 2. राठौड़ रामदास जैतमालोत 3. राजा रामशाह ग्वालियर का स्वामी 4. डोडीया भीम सांडावत 5. पड़िहार सेठू 6. सांदू रांमो धरमावत। अमरसिंह आदि गुटखा, क्रमांक 35464, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

19. टॉड, उपर्युक्त, पृ. 357
20. शीरीं मूसवी, द इकानामी ऑफ द मुगल एम्पायर, सिरका 1595–ए स्टेटिसटिकल स्टडी, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1987, पृ. 202
21. आईन–ए–अकबरी में मन्सबदारों की तनख्वाह की दर प्रतिमाह रुपयों में दर्ज की जाती थी। आईन की अपनी प्रति रुपए में 40 दाम की दर से इन मासिक दरों को प्रतिवर्ष रुपयों में परिवर्तित कर लिया जाता था। दृष्टव्य, शीरीं मूसवी, द इकानामी, उपर्युक्त पृ. 213, श्यामलदास ने भी विस्तार से 'मन्सबदारों के कायदे का नक्शा' शीर्षक से मन्सबदारों की तनख्वाह आदि की सारिणी दर्ज की है, वीरविनोद, उपर्युक्त, पृ. 191–94
22. शीरीं मूसवी, पूर्वोक्त, पृ. 215
23. सज्जनसिंह राणावत का आलेख दृष्टव्य 'प्रताप के ग्वालियर के तंवरों से सम्बन्ध', स. सज्जनसिंह राणावत, के. एस. गुप्ता एवं स्वरूपसिंह चूंडावत, द्वारा संपादित ग्रन्थ महाराणा प्रताप से सम्बन्धित स्रोत एवं स्थान, प्रताप स्मारक समिति, उदयपुर, 2002, पृ. 284
24. टॉड, पूर्वोक्त, प्रथम, पृ. 357
25. अब्दुल कादिर बदायूंनी, मुन्तखब–उत–तवारीख, पृ. 236
26. मुंहता नैणसी, ख्यात, सं. बदरीप्रसाद साकरिया, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, 1960, पृ. 40
27. चन्द्रशेखर शर्मा, राष्ट्ररत्न महाराणा प्रताप, आर्यावर्त संस्कृति संस्थान, दयालपुर, दिल्ली, तृतीय संस्करण, पृ. 53
28. रणछोड़ भट्ट, अमरकाव्यम, सं. शक्तिकुमार शर्मा 'शकुन्त' एवं राजेन्द्र प्रसाद भटनागर, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर 1985, पृ. 207; वीरविनोद, भाग–2, पृ. 87, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर 1927, पृ. 732
29. अमरकाव्यम, उपर्युक्त, पृ. 207
30. वीरविनोद, भाग–2, उपर्युक्त, पृ. 87
31. ओझा, उपर्युक्त, पृ. 732
32. महाराणा राजसिंह पट्टा बही – पट्टेदारों री विगत, महाराणा राजसिंह परगना बही, स. हुकमसिंह भाटी, हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 1995, पृ. 11–14, यद्यपि बारां नामक कोई स्थान नहीं था लेकिन संभवतः इसका नामकरण इसकी भौगोलिक स्थिति के अनुसार निर्धारित किया गया होगा। सम्पादक ने इस परगने की स्थिति की पहिचान की है। उसके अनुसार भींडर के

आस–पास का क्षेत्र बारां कहलाता था जिसमें बल्लभनगर, डूंगला, बड़ी सादड़ी और लसाडिया तहसील के गांव सम्मिलित हैं (दृष्टव्य, उपर्युक्त, टिप्पणी–2, पृ. 11)

33. अबुल फजल, अकबरनामा, भाग–3, उपर्युक्त, पृ. 246; बदायूंनी, उपर्युक्त, पृ. 239; वीरविनोद, उपर्युक्त, पृ. 152
34. हरिहर निवास द्विवेदी, उपर्युक्त, पृ. 256–57
35. 'मेवाड़ ठाकुरां री साख बही महाराणा अमरसिंह' वि. सं. 1761 मज्झमिका, सं. हुकमसिंह भाटी, वर्ष 1992, भाग–16, पृ. 22
36. हरिहर निवास द्विवेदी, उपर्युक्त, पृ. 265
37. महेन्द्रसिंह तंवर, महाराणा प्रताप के प्रमुख सहयोगी–राजा रामशाह तंवर ग्वालियर, पृ. 84 लेखक ने सज्जनसिंह राणावत के आलेख के आधार पर लिखा है।
38. रतनचन्द्र अग्रवाल, 'महाराणा प्रताप और तंवर नरेश' महाराणा प्रताप स्मृति ग्रन्थ, स. देवीलाल पालीवाल, साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर, 1969, पृ. 98–100

शेखावाटी की ''मूणा लिपि''

पं. कैलाश चन्द्र घनश्याम पाण्डेय

कछवाहा उदयकरण के तीसरे पुत्र बालाजी के निःसन्तान पुत्र मौकल को शेखबुरहान की कृपा से जिस पुत्र की प्राप्ति हुई उसका नामकरण 'शेखा' किया गया था। इसी शेखासिंह (1433–1488 ई.) की प्रसिद्धि के कारण उसकी बलवाड़ा जागीर ''शेखावाटी''कही जाने लगी। वर्तमान में शेखावाटी में राजस्थान के 'सीकर', 'झूझनु', नागौर डीडवाना जिलों का क्षेत्र समाहित हैं। शेखवाटी व इसका समीपवर्ती क्षेत्र 'सेठों की भूमि' कहलाता है। जगतसेठ (नागौर),[1] पोद्दार (चूरू),[2] गनेड़ीवाल (गनेड़ी),[3] बिड़ला (पिलानी),[4] बजाज (काशी का वास),[5] खेतान (रामगढ़),[6] चोरडीया (डीडवाना)[7] आदि प्रख्यात हैं। इन्हीं व्यापारिक घरानों ने जिस लिपि का विकास किया उसे 20वीं के प्रारंभ (1913 ई.) में 'मूणा'[8] तथा 21वीं शताब्दी (1986 ई.) के अध्ययनकर्ता ने 'मुड़िया' नाम दिया है।[9] जहाँ तक मुझे ज्ञात है अद्यावधि तक इन घरानों के ''मूणा'' में लिखे व्यापारिक पत्रों का प्रकाशन नहीं हुआ है। गनेड़ीवाला संस्थान, मन्दसौर में सन् 1838 ई. से लगभग 3,000 से भी अधिक मूणा लिपि में व्यापारिक पत्रों, बहीखातों का संग्रह है। **यह संग्रह संभवतः भारत का पहला व्यापारिक पत्रों का संग्रह है,[10] जिनके कुछ महत्त्वपूर्ण पत्रों पर केन्द्रित इस शोधपत्र का प्रस्तुतीकरण इसके अन्तर्गत किया जा रहा है।** शोध पत्र से सम्बन्धित सभी सन्दर्भ, शोधपत्र के अंत में प्रस्तुत किये गये हैं।

ये व्यापारिक पत्र 19वीं–20वीं शताब्दी में विदेशों से आयातित कागज के टुकड़ों पर लिखे जाते थे। इन कागज के टुकड़ों पर विभिन्न कंपनियों के उभारदार चिन्ह लगे होते थे। कुछ कागज के टुकड़े पारदर्शी होते थे जिन पर होल्डर से लिखना एक चुनौती होता था। इन पर भी लेखन कार्य मुनीम लोग ही करते थे। चिट्ठियों के आकार का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि ये तीन आकार की होती थी। विषय वस्तु के आधार पर बडी, मध्यम, अथवा छोटी चिट्ठियों का प्रयोग किया जाता था। **यद्यपि अब मूणा लिपि में न तो कोई बही–खाते लिखता है व नही कोई इसे पढ़ना जानता हैं।**

साधारणतः सेठों के रिश्तेदार ही मुनीमगिरी का रोजगार पाते थे। यदि परिवार के सदस्य या रिश्तेदार योग्य नहीं होते तो अन्य व्यापारिक जातियों

जैसे– जैन, माहेश्वरी, अग्रवाल, पोरवाल समाज के लोगों को मुनीम का पद मिलता था। यही कारण है कि अक्सर मुनीम सेठ हो जाते और कई बार सेठ सड़क पर हो जाते थे। **कभी गनेड़ीवालों के मुनीम रहे बिड़ला परिवार के लोग अब भारत के प्रतिष्ठित पूंजीपतियों में हैं।**[11] पर, बिना किसी लाग लपेट के गनेड़ीवाला संस्थान और अन्य व्यापारिक घरानों के पत्र व्यवहार को देखकर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि मुनीम कोई असाधारण प्रतिभा का धनी ही होता था। चूंकि भारत का संपूर्ण व्यापार राजस्थान के मारवाड़ी व्यापारियों के हाथ में ही था। अतः उनके मुनीम मारवाड़ी समाज के ही थे, उनकी भाषा और लेखन समान था, परन्तु लेखन शैली व लिपि में कभी समानता संभव नहीं रहती है।

भारत में सबसे प्राचीन पाषाण अभिलेख सम्राट अशोक मौर्य के काल के मिले हैं। ये अभिलेख क्रमशः ब्राह्मी, खरोष्ठी तथा अरेमाईक लिपियों में है। इन प्राचीनतम अभिलेखों पर उत्कीर्ण अक्षरों का अध्ययन करें तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इस प्रारंभिक लेखन की दो विधाएं थीं– पहली, सीधा व सुंदर लेखन। दूसरी, अशुद्ध एवं टेढ़ा–मेढ़ा लेखन। आगे चलकर लेखन की ये दोनों विधायें पाषाण अभिलेखों, ताम्रपत्रों और पाण्डुलिपियों में समान भाव से मिलती है।

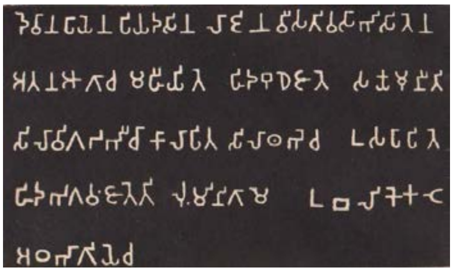
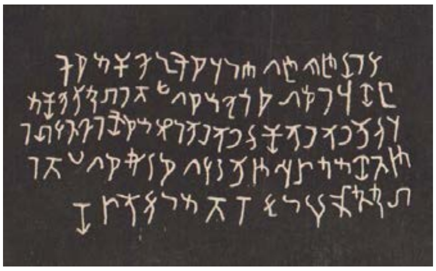
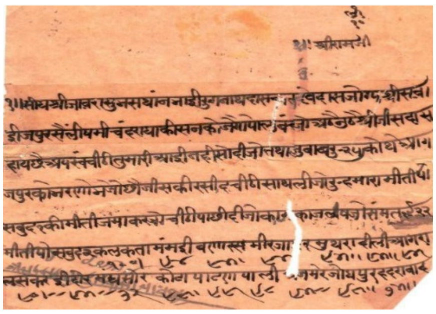
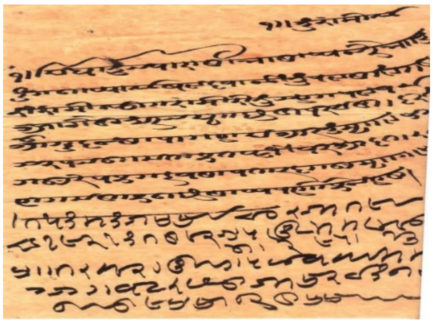

व्यापार हमेशा से एक गोपनीय विधा रही है। अतः व्यापारी अपने व्यापारिक रहस्यों को छुपाने के लिए कूट अक्षरों, संकेतों व बोली का प्रयोग करते थे और आज भी करते हैं। ऊपर एक ही काल के दो पत्रों को देखकर हम इस बात से सहज अनुमान लगा सकते हैं कि 2000 वर्षों में लेखन की ये दोनों विधाएँ अपने–अपने क्षेत्र में संपन्न रहीं है।

इस पत्रिका में प्रकाशित शोधपत्रों को कालानुक्रम में प्रकाशित कर जमाने का पूर्ण प्रयास किया गया है। इन पत्रों के प्रकाशन का प्रमुख उद्देश्य तत्कालीन लेखन की विभिन्न शैलियों को दर्शाना है। प्रत्येक पत्र के नीचे उसमें लिखी विषय वस्तु की अति संक्षिप्त जानकारी दी गयी है ताकि इनके पूर्ण वाचन में सुविधा हो। **इन पत्रों के वाचन से नवीन शोधार्थी ''मूणा लिपि'' के अपने अध्ययन को आगे बढ़ा पायेगें, ऐसा** मेरा दृढ विश्वास है।

19वीं शताब्दी के मूणा लिपि के पत्र

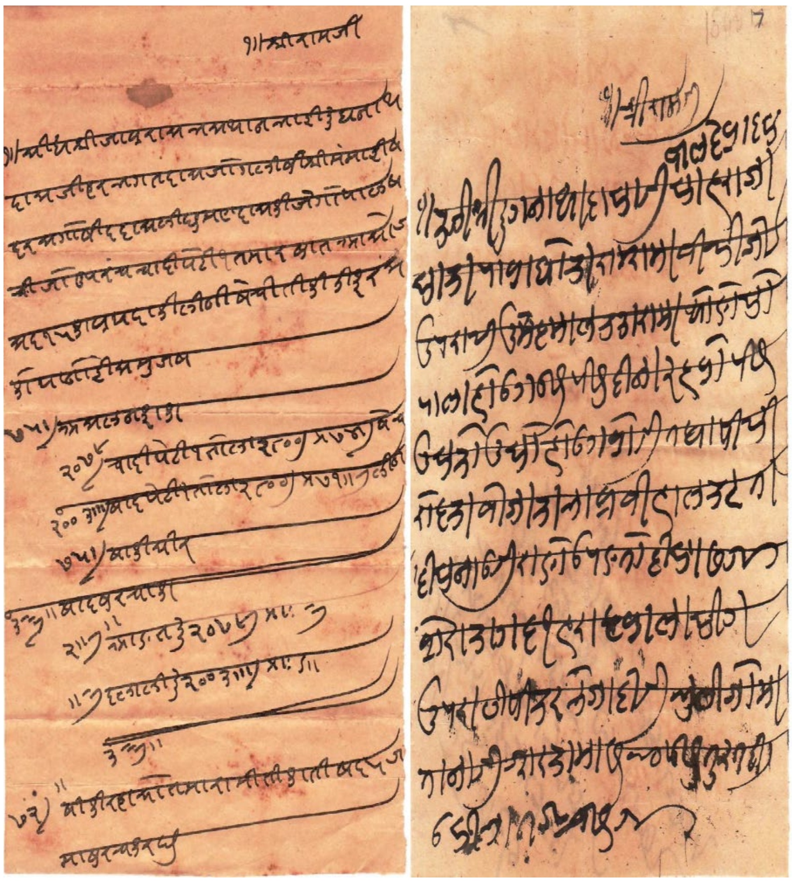

1. यह पत्र **मुम्बई** (महाराष्ट्र) से गोविन्ददास लिछमनदास ने सेठ रूघनाथदास बलदेवदास, जावरा को लिखा है– ''चाँदी की असल नई पेटी जिसमें 2800 तोला चाँदी है वायदे के सौदे में लेकर बैंची है। विक्रय का पाना भेजा हैं।

2. यह पत्र **वडोदरा** (गुजरात) से भेजा गया है मूल वाचन इस प्रकार है– ११श्री रामजी11 सीजी रूगनाथदासजी वालदेवा दस साहराजा साका पावाघोका राम्राम बीचोजी उपरच उमेदमाल उकाराम बडोदा वाला होन का ... 1848 ई.।

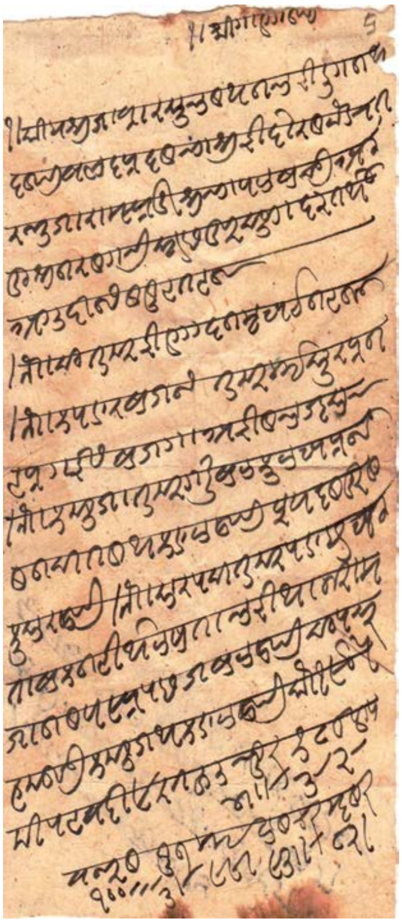

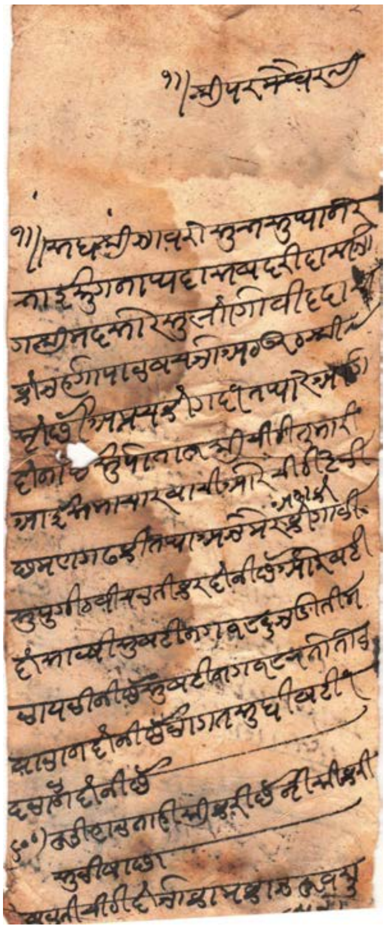

3. यह पत्र **इन्दौर** (म.प्र.) से चतरभुज रामचन्द्र ने रघुनाथदास बलदेवदास, जावरा को लिखा है। आपकी कपड़े की एक गठान मुम्बई से रवाना होकर पहुंचने वाली है। 1848 ई.।

4. यह पत्र **मन्दसौर** (म.प्र.) से गोवीन्ददास ने सेठ रूगनाथदास बदरीदास जावरा को लिखा है। लछमणगढ़ तथा अजमेर की चिट्ठी मिली। अफीम की 18 वटी मिली, वे तोल दी। एक बट्टी दलाल को दी। 600 रू. की हुण्डी अभी सीकरी नहीं है। 1848 ई.

मुड़िया लिपि 20वीं शताब्दी में

5. 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में मुड़िया का प्रचार जनसाधारण में भी हो गया था। यह पत्र 15 मई, 1900 ई. का है, जिसे जावरा की नर्मदाबाई ने मन्दसौर के हमीरलाल वजेराम ब्राह्मण को भेजा है, इस पत्र में लिखावट मुड़िया लिपि की है। पोस्टकार्ड का मूल वाचन इस प्रकार है :–

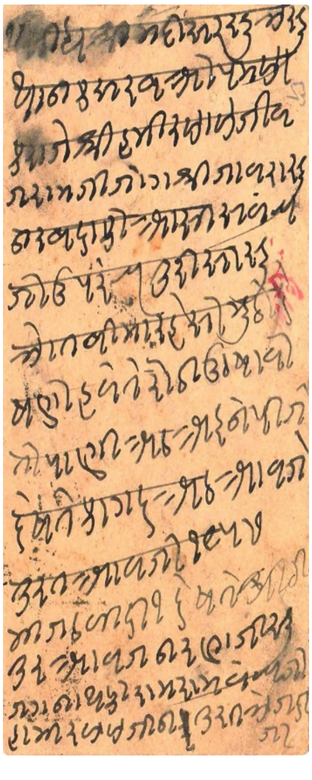

सिद्ध श्री मन्दीसर शुभ सू
थान क सरब ओपममा
कराजो श्री हमीरलाल जी व
जरामजी जोग श्री जावरा सु
नरबदा को आसीस बंच
जो उपरंच तुरी सासु
भोत बीमार हे सो मुण्डो दे
खडो हवे ते रोटा उठ खावो
तो पाणी अठ आई ने पीजे
देखते कागद अठ आवजे तुरत आवजे १६५७
मी जठ वीदी १ देखते आठी
तुर आवज नरायण जी सु
जगन्नाथ का राम राम बंचजो
हामीरलाल जी ने तुरत भेज दो जी

6. यह पत्र **रतलाम** (मध्य प्रदेश) से लालचंद सतराम ने सेठ रघुनाथदास हरभगतदास जावरा को दीपावली के लक्ष्मी पूजन के बाद लिखा है। इसमें गेहूं, मक्का पुरानी, मक्का नई, जुवार, तिल, पोस्तादाना तथा शक्कर के भाव दिये हैं। 11, नवम्बर, 1904।।

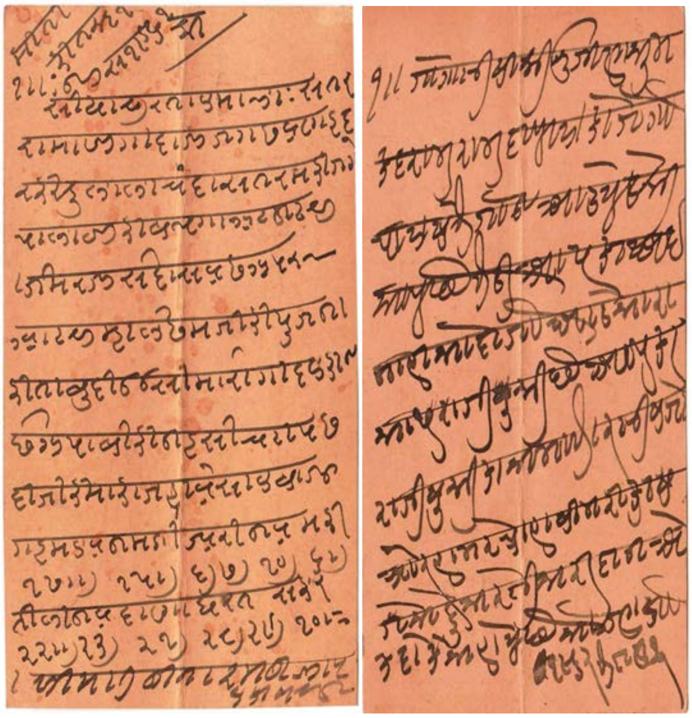

7. यह पत्र मुकुन्दराम रामदयाल ने उज्जैन (मध्य प्रदेश) से सेठ रघुनाथदास हरभगतदास, जावरा को लिखा है। सेठ रामदयाल को हा (सांस की बीमारी) है। डॉक्टर ने कहा कि आराम हो जावेगा। 07, अप्रैल, 1905।।

मोडी व मूणा लिपि में अन्तर :—

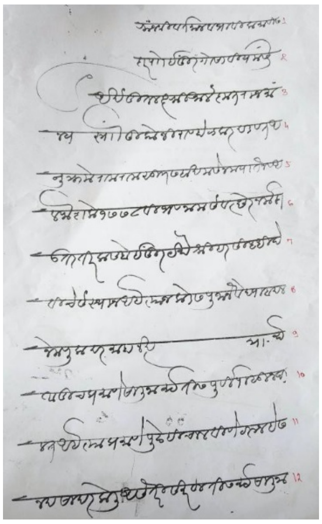

मोड़ी एक प्राचीन लिपि है जो मराठी भाषा को लिखने में प्रयोग की जाती है। मोड़ी लिपि का प्राचीनतम प्रमाण कागज के उपर 1389 ई. (शक 1311) का बताया जाता है। यह पत्र भारतीय इतिहास संशोधन मण्डल पूना के संग्रह में उपलब्ध है।[12] इस कारण से मोड़ी लिपि का काल यादव काल (13—14वीं शताब्दी) माना जाता है। मोड़ी लिपि कैसे प्रारम्भ हुई? इस विषय पर राजवाड़े का मत यह है कि—'' यादव साम्राज्य के दरबार में हैमाद्री पण्डित ने पहली बार लंका जाकर इस लिपि को सीखा तथा बाद में भारत में प्रचारित

किया।'' लिपिकार लक्ष्मण श्रीधर वाकणकर ने 1980 में स्वयं लंका की यात्रा की और यह खोजने का प्रयास किया कि क्या सिंहली लिपि व मोड़ी लिपि में कोई साम्यता है ? आपने, यह निष्कर्ष निकाला कि मोड़ी लिपि और सिंहली लिपि में कोई साम्यता नहीं है। श्री वाकणकर का मत है कि– **''मोडी़ लिपि ही देवनागरी ची जलद लिपि मानली पाहिजे''**[13]

मोड़ी लिपि को नवीन स्वरूप प्रदान करने का श्रेय छत्रपति शिवाजी महाराज के चिटनीस बालाजी आवजी को है। मोड़ी चूंकि मराठों की प्रशासनिक लिपि रही अतः यह शिवाजी महाराज के शासन काल (1627–1680 ई.) से लेकर 1950 तक व्यवहार में रही। आगे चलकर खैर मंत्रीमण्डल ने मोड़ी के अध्ययन को अनावश्यक ठहराकर इससे भावी पीढ़ी को वंचित कर दिया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि अब इसको पढ़ने वाले विद्वान नहीं बचे हैं।

मूणा लिपि इतनी प्राचीन नहीं है, मूणा लिपि के दस्तावेज 17वीं शताब्दी के अन्त व 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक ही प्राप्त होते है। लिपिविद् गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने 'भारतीय लिपिमाला' (1936 ई.) में इस लिपि का कोई जिक्र नहीं किया है।[14] वास्तव में मूणा लिपि ब्रिटिश कालीन भारत की व्यापारिक लिपि है। यह लिपि उन्हीं व्यापारियों की लिपि थी जो मारवाड़ से दूरस्थ अंचलों में व्यापार कर रहे थे। अतः जिस प्रकार मोड़ी लिपि की भाषा मराठी है, ठीक उसी प्रकार मूणा लिपि की भाषा मारवाड़ी है। मोड़ी लिपि पर मुसलमानी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इसमें शहूर , हिजरी, तथा फसली सन् तथा फारसी– उर्दू शब्दों तथा अंकों का प्रयोग होता है।15 इसके विपरीत 'मूणा' विशुद्ध सनातन धर्मावलम्बी व्यापारियों द्वारा अपनाई गयी लिपि है और इसमें किसी प्रकार का अन्य धार्मिक प्रभाव नहीं है।

'मूणा' या मुडिया तथा मोड़ी वर्णमाला में स्वर 'इ' और 'ई' को छोड़कर कोई समानता नहीं है। यह एक स्वतंत्र लिपि है। इसका अध्ययन 18–20वीं, शताब्दी के ब्यापारिक इतिहास लेखन में महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

आभार

गनेड़ीवाला ट्रस्ट, मंदसौर के श्री प्रदीप गनेड़ीवाल ने अपने परिवार में संग्रहित मूडा लिपि के कोई 3,000 पत्रों का अध्ययन करने का अवसर प्रदान किया, इसके लिए लेखक गनेड़ीवाला परिवार, मंदसौर का आभार प्रदर्शन करता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंह पारसनाथ, जगत्सेठ और बंगाल में अँगरेजी राज की नींवें, पृ. 15, भारती भण्डार, प्रयाग, 1950.
2. अग्रवाल गोविन्द, वाणिज्य–व्यापार में मुनीम–गुमाश्तों की भूमिका (पोद्दार संग्रह) पृ. 6, लोक संस्कृति शोध संस्थान नगर–श्रीचूरू, 1983.
3. मिश्र डॉ.रतनलाल, गनेड़ीवाला गौरव ग्रंथ, सेठ जुगलदास गनेड़ीवाला चैरिटेबल ट्रस्ट, कोलकाता, 1993.
4. बिड़ला घनश्यामदास, भारतीय व्यापारियों का परिचय, काम. बुक पब्लिशिंग हाउस, अजमेर, 1936.
5. श्रीमन्नारायण, आ. भा. के निर्माता जमनालाल बजाज, प्र. विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1976.
6. भारद्वाज लक्ष्मण, आपणों रामगढ़, श्रीकृष्णपुरम्, कल्याण महाराष्ट्र, 2013.
7. पाण्डेय कैलासचन्द्र घनश्याम, समाजभूषण सेठ नथमल हेमराज चोरडीया स्मृति ग्रंथ, सेठ नथमल हेमराज चोरडीया ट्रस्ट, नीमच, 2016
8. पण्डित मथुरादास, विद्याज्ञानप्रकाश पृ. 5–7, श्रीकृष्णदास खेमराज, व्येकटेश स्टीम प्रेस मुम्बई, 1913
9. अग्रवाल गोविन्द, समृद्ध भारती बीमा पद्धति, ले. निवेदन, लोक संस्कृति शोध संस्थान, चूरू, 1987.
10. पाण्डेय कैलाश चन्द्र घनश्याम, राय साहब, सेठ नारायणदास गनेड़ीवाला स्मृतिग्रंथ (अप्रचलित मुणा लिपि का संक्षिप्त सर्वेक्षण), टंकित प्रति, गनेड़ीवाला ट्रस्ट, मन्दसौर, 2025.
11. जाजू रामनिवास, मरूभूमि का वह मेघ, राजपाल एण्ड सन्स ,पृ. 28–31, दिल्ली, 1985
12. कुलकर्णी म.रा. मोडी लिपि परिचय आणी ऐतिहासिक नमूना पत्रे पृष्ठ– 2, भारतीय इतिहास संकलन समिति पूणे, 1991
13. लिपिकार लक्ष्मण श्रीधर वाकणकर, टेक्नीकल डायरेक्टर इंस्टीट्यूट् आफ् टाइपोग्राफिकल रिसर्च, पूणे (महाराष्ट्र), मराठा– युग में प्रचलित मोड़ी लिपि की उत्पत्ति, (शोधलेख), प्रेरणा, पृ 36, स्वर्ण जयन्ती विशेषांक, शा. बा. उ.मा.वि. मन्दसौर, प्रबन्ध संपादक– कैलाश चन्द्र पाण्डेय, 1983.
14. गौ. ही. ओझा, प्राचीन भारतीय लिपिमाला, मुंशीलाल मनोहरलाल, नई दिल्ली.
15. कुलकर्णी म.रा. मोडी लिपि परिचय आणी ऐतिहासिक नमूना पत्रे पृष्ठ– 2, भारतीय इतिहास संकलन समिति पूणे, 1991.

30–11–2025

जीवन की जल के साथ अतिव्यापिता

ओम प्रकाश शर्मा

भारत का भूगोल निर्धारण में जल प्रवाहों की भूमिका रही है, प्रवाह चाहे महाभारतकालीन हो, बौद्धकालीन हो या उसके बाद के समय का हो। नदियों के प्रवाहों एवं उनके समान्तर चलने वाले रास्तों की तलाष में की गई यात्राओं ने भारत के प्राचीन भूगोल से किसी टीले की तलहटी में गुम हो गये परिवेश को जोड़ने का प्रयास किया। ग्रामों में निवास करने वाले विलक्षण स्मृतियों के स्वामियों से मेरा मिलना हुआ, जिन्होंने मुझे इस धरती के उत्थान की कहानियों को अपने अंदाज में कहा, जैसा कि उन्होंने अपने पूर्वजों से सुना था। ये वे जनश्रुतियाँ हैं, जो पीढ़ियों से कथानक बनकर किसी न किसी रूप में जिन्दा रही है, परन्तु इस रूप में भी इतिहास है।

क्षेत्र में कई स्थान आज भी हजारों बरसों की यादों को समेटे उस समय की भौगोलिकता की गवाही दे रहे हैं। नदियों के प्रवाह के निशान कहीं–कहीं आज भी मिल जाते हैं, छोटे छोटे शंखों ने भी दो पंक्तियों में अपने बारे में जानकारी दी है। कहीं कहीं तो ग्रामों ने स्वयं बोलकर कहा है कि हमारा नामकरण भी तो किसी भौगोलिक घटना के कारण हुआ है। नदियों का जिक्र आने पर हाकरा दरियाव के बारे में सुनने एवं जानने को मिला। हाकरा को हम कितना जान पाये और कितना कल्पनामय रहा, इसका उत्तर हम सबको

जानने की आवष्यकता है। हाकरा नाम के दरियाव ने आज भी सम्मोहित कर रखा है। एक विद्वान बुजुर्ग ने मुझे एक बात बताई जिसे सुनकर मैं किंकर्तव्यविमुढ़ हो गया, उनके द्वारा कहे शब्द मुझे याद है कि ''लोग कहते हैं कि हाकड़ा तो मुलतान चला गया परन्तु हाकरा बचपन और युवावस्था में यहीं रहा करता था। तुम कहीं भी चले जाओ तुम्हें हर मोड़ पर हाकरा ही मिलेगा तभी तो यहाँ रहने वाले हाकड़े के इस दरियाव को हाकड़ा का बाण भी कहते हैं।'' पुराने रास्तों से इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति को समझने में बहुत मदद मिली रास्ते आज भी उन पैरों के निशानों के बारे में बता देते हैं कि इन रास्तों से होकर कोई गुजरा था। रास्तों ने जलीय प्रवाह के समान्तर चलने की जो सीख ली उससे रास्ते और जलीय प्रवाह को ढूँढ़ने में सहायता मिली।

रेत के इन धोरों से झांकती धाँधले भाटे की परतें बहुत से स्थानों पर आज भी नजर आती है जहाँ पर कभी पानी की आवक किन्ही स्रोतों से रही हो जो मरूस्थल की रेत पानी में मिलकर आगे प्रवाहित हो जाने से इस स्थान पर पानी के धरातल में स्थिर नहीं हो पाई जिससे पानी के सूख जाने से धाँधले भाटे की सतह नजर आ गई। समय बीतता गया कहीं दूर से प्रवाहित होकर आने वाले पानी की आवक धीरे धीरे कम होकर पूर्णतया बन्द हो जाने से धाँधले भाटे के ये मैदान बरसात के पानी पर निर्भर होकर रह गये। चूरू जिले के उतरादे ग्रामों एवं नोहर, भादरा, रावतसर के दक्षिणी दिशा के ग्रामों की तलहटियों में आज भी कई स्थानों पर देखा जा सकता है कि बरसात का पानी पूरे साल सतह पर रहता है।

गहराई से देखा जाये तो कई स्थानों पर यह पाया गया है कि टीलों की इन तलहटियों में कालान्तर में मिट्टी जमा हो जाने से धाँधले भाटे की परत छुप सी गई है, जहाँ से होकर पानी का प्रवाह होता था अर्थात दो निचली सतहों के कारण तालाब के रूप में एकत्रित पानी एवं उन सतहों को बड़े नालों के रूप में जोड़ने वाली भूमियों पर मरूस्थल की रेतीली सतह आ गई, परन्तु गौर से देखने पर आज भी यह प्रवाह की रेख नजर आती है। मनुष्य की बसावट में सहायक मुख्य घटक पानी है, जल की उपलब्धता के साथ–साथ कालान्तर में आसपास बस्तियाँ होने के संकेत थेहड़ों के रूप में आज भी गवाही दे रहे हैं।

बहुत से ग्राम इन नालों के प्रवाह के तले पानी की सुलभता को स्वीकार करते हुए कालान्तर में अपनी बसावट के निशान छोड़ गये हैं, जिनमें से कुछ तो आज भी गैर आबाद ग्राम के रूप में जीवित हैं, कुछ बहुत से स्थानों पर थेहड़ों के रूप में एवं जन मानस की स्मृतियों में जीवित है तो कुछ इस

मरूस्थल की अथाह रेत में समा गये। थेहड़ अंतिम बसावट को प्रथम दृष्टया अवगत करा देते हैं परन्तु प्रथम और अंतिम के मध्य की बसावटों को सिद्ध करने के लिए इन थेहड़ों पर खनन कार्य आवश्यक होने के साथ–साथ ऐतिहासिक तथ्यों पर विचार किया जा सकता है, जिससे इस क्षेत्र की ऐतिहासिकता के खो गये पहलुओं को सामने लाने के प्रयास किये जा सकते हैं, इन दोनों तथ्यों को हल करने में जनश्रुति एवं इस क्षेत्र की भौगोलिकता का अध्ययन एक सशक्त माध्यम है। इन जलीय प्रवाह स्थलों के किनारों पर बस्तियाँ थी जो आज थेहड़ के रूप में सामने आ रही है।

एक समय था जब इन प्रवाहित होने वाले नालों में पानी की भरपूर आवक होती थी। क्षेत्र धन धान्य से परिपूर्ण होकर निवासियों का जीवन सरल था। धाँधले भाटे के इन मैदानों में खेती कम तथा पशुपालन अधिक होने की संभावना व्यक्त की जा सकती है क्योंकि धाँधले भाटे के इन समतल मैदानों का चरित्र अधिक कठोर एवं दलदली होने के कारण पशुपालन के लिए अधिक उपयुक्त था, कृषि के लिए नहीं। इन मैदानों में पानी की आवक होकर पानी समतल क्षेत्रों में दूर तक विस्तारित होकर कई कई किलोमीटर वर्ग क्षेत्रफल में था। भूमि हरी भरी थी और चारागाह के रूप में प्राकृतिक रूप से विकसित थी। इन चारागाहों में आसपास की बस्तियों के निवासियों के पशुधन को हरे चारे की सुलभता थी। जिसका परिणाम यह रहा कि इस क्षेत्र के निवासियों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन रहा, जो आज भी इन क्षेत्रों में देखा जा सकता है।

अब हम उस समय अन्तराल में जाते हैं जब इस क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों में बदलाव आना आरम्भ होने लगा, इस धरा पर प्रवाहित होने वाले नालों में जिस नदी या जिन नदियों से पानी की आवक तय होती थी और दूर दूर तक पानी बहता था, नदियों का पानी सूखने लगा जिसके कारण इन हरे भरे मैदानों में पानी की आवक कम होने लगी और हरियाली सिकुड़ने लगी। परिणाम यह रहा कि क्षेत्र में शुष्कता बढ़ी और मरूस्थल जैसे हालात बनने लगे, जैसा कि आज दिखाई दे रहा है। गर्मी के मौसम में गर्मी बढ़ने पर तेज हवाओं ने आना आरम्भ कर दिया। इन गरम तेज हवाओं के साथ मिट्टी के कण भी आने लगे और यह क्षेत्र धीरे धीरे मरूस्थल में परिवर्तित होने लगा। भौगोलिक स्थिति में आया यह परिवर्तन जो आज हमें दिखाई दे रहा है, एक लंबे अन्तराल का साक्षी है। समय के इस लम्बे अन्तराल ने प्राकृतिक रूप से हुए परिवर्तनों को आज भी किसी न किसी रूप में इस कारण जिन्दा रखा है कि हम इसे अपने प्रयासों एवं साधनों से जान सकें।

मैं स्वयं को समय के उस अन्तराल में खड़ा पा रहा हूँ जब उत्तरी पूर्वी दिशाओं के मध्य मार्गों से पानी की आवक धीरे धीरे कम होनी आरम्भ हो गई है, दलदली धरती तो बमुश्किल नजर आ रही है। निचले क्षेत्रों में पानी का सम्पर्क मुख्य प्रवाह से टूट जाने के कारण पानी से तृप्त हुई मिट्टी पानी को सोख नहीं सकी, बचा रहा तो पानी की आवक का एक मात्र स्त्रोत बरसात का पानी, जिसकी उपस्थिति आज भी है जो चौमासे के चार महिनों में अपनी हाजरी लगा दिया करता है और कभी कभार मन करने पर पूरे साल इस धरती पर रहता है, इसके कई उदाहरण भौलूसर, ददरेवा, खोजेर, रामपुरा रेणु, खुड्डी, लुकशा, खण्डवा पट्टा पिथीसर आदि बहुत से राजस्व ग्रामों के धाँधले भाटे के धरातलों पर आज भी मौजूद है। सूक्ष्मता से देखें तो अब भी इन स्थितियों में बदलाव हो रहा है, धाँधले भाटे के ये धरातल जलविहीन अवस्थाओं के कारण मरूस्थलीय स्थितियों के समक्ष हार मानने लगे और परिणाम यह रहा कि मरूस्थल आगे बढ़ने लगा। आरम्भ के दिनों में बहने वाले पानी पर रेत के कण गिरते तो वे या तो बहकर किनारे पर चले जाते या प्रवाह के साथ दूर तक आगे चले जाते। जिसका परिणाम यह रहा कि नालों का प्रवाह क्षेत्र रेतीली मिट्टी से भर गया और कुछ स्थान ऐसे भी थे जो निचले क्षेत्र में थे अथवा उनका धरातल नीचा था जिसके कारण पानी सूख नहीं सका और बरसात के पानी से अपनी प्यास बुझाता रहा और आज भी इस क्षेत्र में मौजूद है। वर्तमान में एक मात्र पानी की आवक का स्रोत वर्षा का पानी ही है जो कुछ स्थानों पर बारह महिनों धरातल पर उपस्थित रहता है अन्यथा इस मरूस्थलीय भूमि में पानी मृग मरीचिका की तरह नजर आ रहा है। जलीय आपूर्ति के हिसाब की गणना करें तो रोजाना पानी की एक बून्द कम हो रही थी, जिसके कारण प्रवाह क्षेत्रफल कम होने लगा और किनारे सिकुड़ने लगे, मानो दूर देश से आने वाली शुष्कता को यहीं विराम मिला है, बाद में तो शुष्कता स्वच्छन्द हो गई, तापमान में वृद्धि के परिणाम प्राप्त होने लगे। पानी की कमी, मरूस्थलीय स्थितियों का बनना आदि के कारण तापमान में वृद्धि का प्रभाव यहाँ रहने वाले मनुष्यों एवं पशुओं पर पड़ने लगा, बैचेनी साफ नजर आने लगी, पोषकता में कमी धरती के साथ–साथ मनुष्यों एवं पशुओं प्रभाव डालने लगी, बस्तियाँ छोटी होने लगी, स्थानापन्न की स्थितियाँ बनने लगी।

क्षेत्र में कहीं कहीं बचे इन मैदानों की भौगोलिक स्थिति पर नजर डाली जावे एवं विचार किया जावे कि एक समय था जब ये मैदान आपस में किसी प्रवाह से संयोजित होते थे, इस बात की धारणा से हमें किन्ही दो मैदानों के मध्य एक रेख दिखाई देती है जो पानी के प्रवाह के कारण बनी एवं आगे प्रवाह का मार्ग तय करती हुई रेख के रूप में दूसरे मैदान से जाकर मिली

है। ध्यान से देखने पर पता चलता है कि धाँधले भाटे के इन मैदानों के एक और मिट्टी का अधिक जमाव पाया जाता है जो अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक है और अधिक उँचाई लिये हुए होता है। दो मैदानों के मध्य प्रवाहित होने वाले पानी का प्रवाह जिस और से जाता था उस स्थान पर भी प्रवाह क्षेत्र देखा जा सकता है जिसके दोनों किनारों पर मिट्टी का जमाव व कहीं कहीं धाँधली परत भी दिखाई दे जाती है।

हमें अब प्रवाह के मार्गों की तलाश में उन रास्तों को तय करना है, जो प्रवाह के साथ–साथ जाते थे अर्थात पानी का प्रवाह कहाँ से आता था और कहाँ तक जाता था। रास्ते तय करने में प्रथम अध्याय रही जनश्रुतियों के रूप में जिन्दा पहेलियों को हल करने का प्रयास, दूसरा पीळे रंग की धरती में चांदी के रंग के धाँधले भाटों की परतें जिनको आज भी रेतीली मिट्टी अपने आगोश में नहीं ले सकी तीसरा वे रास्ते जिन पर न जाने कब से मनुष्य अपने पैरों के चिह्न छोड़ते आया है और आज भी अनेक नगरों को एक दूसरे से जोड़ते हुए सड़क मार्गों के रूप में जीवित है, इन मार्गों में अधिक अन्तर नहीं आया है, किसी एक मार्ग का अध्ययन करें तो रास्ते का नब्बे प्रतिशत से अधिक तो उसी रास्ते का अनुसरण किया जा रहा है शेष मार्ग प्रवाह बन्द हो जाने के कारण प्रवाह के समान्तर नहीं गामित होकर सीधे सरल रेखा में हैं। चौथा, पानी के प्रवाह के मौजूद निशान जिन्होनें मुझे सहगामी होने के लिए कई बार आवाजें दी है। जनश्रुतियों एवं कथाओं का सशक्त माध्यम मुझे इन रास्तों पर चलने के लिए मार्ग सुझाते हुए उस छोर तक ले गया जहाँ से एक दूसरी लोक कथा इन्तजार कर रही है, बड़े बुजुर्गों के मन की अथाह गहराईयों में कहीं रच बस गई ज्ञान की परतें मेरे साथ रही जिनके सहारे दिशा पाकर इस क्षेत्र की उन पहेलियों को हल करने का प्रयास किया जो धीरे से कान में आकर कह जाती है कि इस क्षेत्र में प्रवाहित होने वाले नाले जो इस पूरे क्षेत्र को हरा भरा करते थे, उनको कौनसी नदी या नदियाँ अपने जल से प्रवाहित कर इस क्षेत्र के लोगों को जीवनदान देती थी।

ग्रामों में भ्रमण के दौरान वृद्ध एवं प्रबुद्ध व्यक्तियों से वार्ता करते हुए अक्सर यह प्रसंग आ ही जाता था कि इस क्षेत्र में सरस्वती नदी बहा करती थी, कोई कहता यहाँ से हाकड़ा नदी का पानी प्रवाहित होता था। नदी या उससे संयोजित होने वाले नालों के प्रवाह का इस क्षेत्र में प्रमाण ढूढ़ने का दृष्टिकोण या जिज्ञासा यह विचार उत्पन्न करने लगे कि कहीं यह सच तो नहीं कि इस क्षेत्र में किसी नदी या नाले का प्रवाह हो। चूरू जिला मुख्यालय के उतरादे ग्रामों में रहने वालों से यह बात सुनी है कि इस क्षेत्र में नदियों का प्रवाह हुआ करता था। वार्ता में प्रवाहित होने वाले नाले का नाम सरस्वती और हाकड़ा से जोड़ते हुए संवाद को आगे बढाया जाता। कोई जलीय प्रवाह

था, जो इस मरूस्थलीय धरती में बहता था, क्या हाकड़ा सक्षम था कि इन रेतीले टीलों पर से वह आराम से गुजर सके। हाकड़ा इस मरूस्थल की मृग मरीचिका से लड़ता हुआ, हकड़ाता हुआ आगे का रास्ता तय करता था। तो क्या, ये प्रवाह हाकड़ा और सरस्वती के थे जो उनकी धाराओं से पोषित हो समय के किसी अन्तराल में विचरण किया करते थे।

कोयलापुर पांटन

चूरू जिले की सरदारषहर तहसील की पूर्वी दिशा में फोगां ग्राम स्थित है। इस क्षेत्र के इतिहास के बारे में उल्लेख है कि कोयलापट्टन एवं कोयलापुर पाटन नामक नगर इस स्थान पर बसा हुआ था। कोयलापट्टन आज फोगां नाम से जाना जाता है। यह ग्राम पुरा महत्व से समृद्ध ग्राम माना गया है। ग्रामवासी बताते हैं कि ग्राम में मकानों, कुण्डों आदि के निर्माण के लिए मिट्टी की खुदाई करने पर पुराने बरतन प्राप्त होते हैं। ग्राम में मरू टीले पर एक मठ स्थित है। मठ में एक नारी के सिर की आकृति पड़ी है, जिसका धड़ गायब है।

मठ में मुझे एक पत्थर दिखाई दिया। इस पत्थर के बारे में मैं अधिक नहीं जान पाया परन्तु जब मैंने पत्थर की तस्वीर को विशेषज्ञों को दिखाया तो उनके द्वारा यह बताया गया कि यह पत्थर तालाब या नदी मे कई कई बरसों पड़े रहने के बाद बना है। कोयलापुर पांटण नगर के बारे में आसपास के क्षेत्रों में यह धारणा है कि यह नगर किसी नदी के किनारे पर स्थित था। मठ में रखा यह सफेद रंग का पत्थर जिस पर छोटे छोटे गोल आकार बने हुए हैं। ये गोल आकार एक फूल की तरह एवं पँखुड़ियों जैसी आकृति अन्दर दिखाई दे रही है। पत्थर सफेद रंग का है, इसका वजन लगभग दो किलो है।

विक्रम की 10वीं–11वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में हकड़ा नदी का प्रवाह था, जो इस क्षेत्र को जीवन दिया करता था। नदी के प्रवाह के पद चिह्न आज भी देखे जा सकते हैं। नदी आज भी स्मृतियों में जिन्दा है, लोककथाओं में जिन्दा है, हकड़ा के गीत आज भी गुनगुनाये जाते हैं। संयोगवष मुझे संवत् 1337 को फोगां में रहने वाले मंगल भाट द्वारा हस्तलिखित पुस्तक प्राप्त हुई। पुस्तक में कोयलापुरपट्टन के बारे में हवाओं में हजारों बरसों से घूम रही स्मृतियों के एक काल की पुष्टि कर दी जब फोगां के कंगूरें सोने से अलंकृत थे। पुस्तक बताती है कि इस नगर में अनंतराय सांखला नामक एक राजा राज किया करता था। अनंतराय सांखला की मुख्य रानी गहलोत गोत्र से थी। अनंतराय सांखला का मुख्य सेनापती सुजाण शाह था। सुजाण शाह ने

रिड़मल जोइया के साथ युद्ध कर उसे जीता था। रिड़मल जोइया का शासन नोरंगपुर नामक स्थान पर था। पुस्तक में लिखा है कि

कोयलापुर पाटंण नगर तठै अनंतराय सांखलो राज करै।।
तीको खुरसा दाहिंद वाण दो न्यांरे सीरे।।

कोयलापुर पांटण नगर जहाँ पर अनंतराय सांखला का शासन है। जिसके शासन क्षेत्र के दो छोर खुरसा एवं दाहिंद नामक दो नदियों के प्रवाह पर है। खुरसा का अर्थ मेरे द्वारा नहीं किया जा सका। दाहिंद शब्द को जहाँ तक मेरे द्वारा अध्ययन किया गया है, हकड़ा को दाहिन्द भी कहा जाता था।

सो कोयलापुर पाटंण कीसोहेक दरसावे।।
तिण ने देखीयां पछे दूजो नगर दाय नहीं आवै।।
तिण री कवि कांई घणी ओपमां गावै।।
संकेपकहि केस मुगावै।।
कोयलापुर पाटंण नगर सुरग जीसो सुख वास।।
अनंतराय राजस करै षट कुंकुं वारह मास।।

इस प्रकार कोयलापुर पांटण नगर किस प्रकार का नजर आता है अर्थात इस नगर को देखने के बाद कोई दूसरा नगर पसन्द नहीं आता है। कवि इस नगर की किस प्रकार से उपमा गावे, संकोचित होकर बालों को खुजलाता है परन्तु नगर की श्रेष्ठता संबंधी शब्द नहीं मिलते हैं। कोयलापुर पांटण नगर में स्वर्ग जैसा सुख निवास करता है अर्थात यह नगर स्वर्ग के समान सुख देने वाला है। अनंतराय छहों ऋतुओं एवं बारह महिनों राज करता है।

पुस्तक में हकड़ा के प्रवाह के बारे में लिखा है कि हकड़ा कोयलापुर पांटण के निकट से बहा करता था।

ऐकण दिंन रै समाजोग अनंतराय दरीयाव जाणरो मन सोवो कीयो।।
नावां डूनां तयारी करावंण रो हुकंम दीयो हुकंम सुणता चोपदार दोडीया छै।।
राजा नावा डूना मंगाय असवारी कीधी हर दरीयाव आया।।
नावां मै वीछायत करी इसी दरसावै छै।।
वीछांयंत उपरि सिंघासंण ढाली अनंतराय जी वीराजिया।।

एक दिन की बात है, अनंतराय को दरियाव जाने की मन में आई। नावों और छोटी नावों को तैयार करने का आदेश दिया जिसे सुनते ही चोपदार तैयारी हेतु दौड़े। राजा ने नावें एवं डूने (छोटी नावें) मंगवाकर उन पर सवारी की और दरियाव में प्रवेश किया। नावों को बिछावन से सजाया गया, जिस पर सिंहासण लगाया गया, जिस पर अनंतराय विराजमान हुए।

पुस्तक में कोयलापुर पांटण एवं अनंतराय सांखला के बारे में विस्तारपूर्वक लिखा गया है। अनंतराय सांखला द्वारा कोयलापुर पांटण पर शासन का समय भी दिया गया है, पुस्तक कोयलापुर पांटण के इतिहास की इस घटना का उल्लेख इस प्रकार करती है।

वेद वाण सूनाम हरि संवत कातिग मास।
कृष्ण पख पड़ि वाकथी वात कैवाठ विलास।

अर्थात अनंतराय सांखला पर विजय की घटना का उल्लेख का समय दिया गया है। चूँकि यह उस समय घटित होने वाली घटना का गुप्त कोड की तरह है जिसे अनकोड इस प्रकार किया गया कि संवत् 1054 कार्तिक माह की कृष्ण पक्ष की यह घटना है जो सन् 997 आती है।

अनंतराय सांखला का कोयलापुर पांटण में राज करना एवं दरियाव का घटना का इस पुस्तक में उल्लेख यह प्रमाणित करता है कि इस स्थान से दरियाव बहता था अर्थात दसवीं शताब्दी के अंतिम बरसों में इस स्थान पर पानी का प्रवाह हुआ करता था। अब बात निकल कर आती है कि यह दरियाव वर्तमान फोगां के किस मार्ग से निकलकर आगे की यात्रा तय किया करता था। फोगां से पूर्व दिशा की ओर करीब दो किलोमीटर जाने पर एक जगह जिसका नाम जोगिया आसन बताया गया है। इस स्थान पर जाळ के कई पेड़ आज भी विद्यमान है। जोगियासन के उत्तर दिशा में पानी के कारण हुआ भूमि का कटाव देखा जा सकता है। इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति का सूक्ष्म अध्ययन किया जावे तो तथ्य निकलकर आता है कि यह स्थान हराभरा क्षेत्र था, परन्तु धीरे धीरे इस क्षेत्र से पानी का प्रवाह कम होने का समय भी यही था। पानी की प्रवाह की रेख आज भी कई स्थानों पर मौजूद है।

कोयलापुर पांटण नगर के नामकरण के बारे में जानकारी प्राप्त होकर साक्ष्य प्राप्त हुए कि ढ़ाणी पांचेरा और वर्तमान फोगां के मध्य कहीं कहीं कोयला बनाने की भट्टियाँ थी जिनके अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं, यह इस बात का संकेत है कि इस क्षेत्र में उस समय घना जँगल था और पेड़ों का सूखा ईंधन प्रचूर मात्रा में उपलब्ध था और इसे जलाकर कोयला बनाकर निर्यात किया जाता था। कोयले के व्यापार के कारण ही हो सकता है इस स्थान का नाम कोयलापुर पाटण हुआ।

शेखावाटी के जलस्रोतों और समाज

डॉ. रितेश व्यास, प्रिंसिपल

भारत की सांस्कृतिक परम्परा बड़ी ही मजबूत व ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यहां का सामाजिक ताना–बाना और संस्थागत जीवन परम्परा बड़ी रोचक रही है। यहां के लोग अपनी जमीन से जुड़ी परम्पराओं तथा संस्कारों को संजोए रखने तथा उसी पर आधारित जीवन जीने में विश्वास रखते हैं। हमारी कुछ परम्परा तो हजारों साल पुरानी है, लेकिन हमारी उनके प्रति आज भी उतनी ही आस्था है और शायद हमारे विकास में उन परम्पराओं की बड़ी भूमिका रही है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण परम्परा हमारी जल के प्रति रही और वो है जल संग्रहित करना तथा उस सुरक्षित जल का अनेक तरह से उपयोग करना। इस जल संग्रहण की परम्परा की शुरूआत तब हुई जब जल के मुख्य स्रोत नदियां, झरने, सूखने लगे। आम जन पर प्रकृति के इस बदलाव का प्रभाव पड़ने लगा तब उन्होंने इन जल स्रोतों में जल को संग्रहित व संरक्षित करने का काम शुरू किया। प्रारम्भिक समय में यह सिर्फ छोटे स्तर पर शुरू हुआ लेकिन आवश्यकता बढ़ने पर इसे बड़े स्तर पर शुरू किया गया। जल संग्रहण शुरू में अस्थाई रूप से ही किया जाता था, लेकिन संग्रहण का महत्व समझ आने पर इसे स्थाई रूप दिया जाने लगा। अब छोटे कस्बों, शहरों तथा खेती में भी इस संग्रहित जल को काम में लिया जाने लगा।

सम्पूर्ण भारत वर्ष में अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं के संदर्भ में राजस्थान अपनी विशेष पहचान रखता है। यहां की सांस्कृतिक परम्पराएं समाज के हर वर्ग में इस तरह रची बसी है कि व्यक्ति इनके बिना स्वयं को अधूरा मानता है।

तालाब/जोहड़ा बनाने की तकनीक –

तालाब का एक नाम जोहड़ा भी है। यह एक विशेष प्रकार का तालाब होता है। शेखावाटी में इसकी बनावट लगभग एक जैसी है, लेकिन राज्य के अन्य भागों में बने तालाब अपनी अलग बनावट रखते हैं। **जोहड़–जोहडी, बंध–बंधिया, ताल–तलैया एवं पोखर–पोखरी** ये वो नाम है जो तालाब के

आकार को देंखकर रखे जाते हैं। वैसे हिन्दी में तालाब का अर्थ–**सरोवर** से है जो संस्कृत के सरस से बना हैं।

सीकर, झुन्झुनूं व चूरू में बने जोहड़े लगभग एक जैसे ही हैं। सुन्दर चौकोर पक्के फर्श के तालाब मैने शेखावाटी में ही देखें। वैसे आमतौर पर तालाब का फर्श कच्चा होता है अर्थात फर्श मिट्टी का ही होता है। लेकिन शेखावटी में बने जोहड़ो का फर्श पक्का है बीच का भाग जो एक दम केन्द्र में होता है वही कच्चा होता है। स्थानीय लोगों से पता चला कि तालाब की इस बनावट के कारण यह था कि पानी जमीन में एक जगह से ही जाए। तात्पर्य जैसे मकान की छत पर बारिश का पानी एक साथ पूरे घर में न आकर एक नाली/पाईप द्वारा नीचे उतारा जाता है, ठीक उसी तरह तालाब में आया पानी भी जमीन में एक साथ न जाकर तालाब के बीचो–बीच बने कच्चे फर्श से ही जमीन के अंदर जाए। इससे भूमिगत जल एक जगह ही इक्ट्ठा होता हैं।

ये तालाब समचौरस है तथा चारों ओर दिवारों पर सुंदर मित्तिचित्रों से सजी छतरियां बनी हैं। इन पर जाने के लिए सिढ़ियां भी बनी हुई हैं। इस तरह की बनावट के जोहड़े एक निश्चित दूरी पर लगभग पूरे शेखावाटी मे मिल जाते हैं।

इन जोहड़ो द्वारा भूमि में गया पानी सही तरह से वापस काम में लिया जाए इसके लिए निर्माणकर्ताओं ने इनके पास ही 100–200 मी., की दूरी पर कुंए भी बना दिए, जिससे भूमिगत जल को वापस निकाल भी लिया जाए। आश्चर्य की बात है कि इन जोहड़ो व कुंओं को बने कई सौ साल हो गए अगर कुछ कुंओं को छोड दे जो रख रखाव न होने के कारण बंद हो गए लेकिन कई कुंए आज भी पानी दे रहे हैं। जो निर्माण कर्ताओ की दूररर्शी सोच का ही परिणाम हैं।

समाज से सम्बन्ध

विवाह, जन्मोत्सव, तीज–त्यौहारों के निभाई जाने वाली परम्पराओं में स्थानीय जल स्रोतों का विशेष स्थान रहता हैं। विवाह संस्कार के समय कुंए व तालाब का महत्व गांवों के लोगों को बखूबी पता है। तालाब पर समूह में जाकर महिलाएं मंगल गीत गाती हैं तथा वहां तालाब किनारे बैठकर जल की पूजा कर विवाह को बिना विध्न के पूर्ण होने की कामना करती है।। यह भी कहा गया है कि बारात निकलने से पूर्व भी दूल्हा तालाब किनारे जाकर पारम्परिक रीति रिवाज के अनुसार जल देवता की आराधना करता हैं।

तालाब वास्तव में प्रारंभ से ही समाज को जोड़ने का एक माध्यम रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में मौहल्ले/कस्बे या ढाणी की महिलाएं समूह में ही तालाब पर पानी भरने जाया करती थी और आज भी ऐसा नजारा कइ जगह देखने को मिल जाता है। समूह में जाने वाली महिलाएं लोक गीत गाती हुई जाती थी जिसमें धार्मिक व लोक देवताओं के भजन कबीरवाणी आदि प्रमुखता से होते थे। इन गीतों में कई ज्ञानवर्धक कहानियां भी होती थी। जिनका उल्लेख हमें किताबों मे नहीं मिलता। यदि वो महिलाएं अलग–अलग जाति/धर्म की है तो और भी रोचक होता था क्योंकि उसमें विभिन्न संस्कृतियों का समायोजन भी देखने को मिलता था।

धार्मिक अनुष्ठानों/संस्कारों में भी कुंए अपनी विशिष्टता के लिए जाने जाते हैं। विवाह संस्कार में मांगलिक कार्यों की शुरूआत ही कुंआ पूजन से शुरू होती है। साथ ही बारात की रवानगी के बाद बीच रास्ते में यदि कुंआ आता है, तो दूल्हां वहां घोडी से उतर का धोंक देता है फिर आगे बढता है।

इसी प्रकार नव विवाहित जोड़ा भी अपनी **जात** यहीं लगाने आता है, जो उस स्थान की पवित्रता को द्योतक है। जब बच्चा पैदा होता है तो उसका जडूला उतारने से पूर्व भी **कुआं पूजन** होता है, जो एक पारम्परिक प्रक्रिया है जिसे सभी जगहों पर निभाया जाता है। इस परम्परा में भी पुत्र उत्पन्न होने पर भी प्रसूता स्त्री परिवार की महिलाओं के साथ घर के निकट स्थित कुंए पर जाकर पूजा करती हैं। कुंए की चार दिवारी पर स्वास्तिक का निशान बनाकर नए शिशु की स्वस्थ रहने की कामना करती है। महिलाएं इकट्ठा होकर गीत गाती हुई जाती है। वहां उस बच्चे को भी जे जाया जाता है जिसका जडूला होता है उसकी मां भी जाती है। कुंए पर एक देवता का मंदिर (थान) होता ह, जिसकी आराधना स्वरूप वहां मंगलगीत गाए जाते हैं। ये परम्परा आज भी विधिवत रूप से निभाई जाती है। बीकानेर के हर क्षेत्र में आज भी इस परम्परा का निर्वाह किया जाता है। गांव में बने प्राचीन कुंओं पर लोग अपने सामाजिक रीति–रिवाजों के अनुसार पारम्परिक क्रियाएं करते हैं जैसे वैवाहिक कार्यक्रम, जडूला आदि । यहां आज भी गांवों की औरतें समूह में तालाबों तथा कुंओं पर लोक गीत गाती हुई दिखाई देती हैं।

इसी तरह गणगौर के त्यौहार में भी कुओं व तालाबों की महत्ता दृष्टिगोचर होती हैं। महिलाएं शहरों में तो जलदाय विभाग के बने कुंओं पर जाती हैं और बडे शहरों में तो वो भी नसीब नहीं होते। गांवों व कस्बों में प्राचीन तालाबों व कुंओं पर वे तीज माता को पानी पिलाने ले जाती हैं। महिलाएं व बालिकाएं गणगौर व तीज माता के गीत गाती हुई गाजे–बाजे के साथ वहां जाती हैं। इस दिन वहां मेला लगता है, बच्चों के झूले तथा

खाने–पीने ठेले भी लगते हैं। गवर माता को पानी पिलाने की परम्परा कब से चली रही है ये तो स्पष्ट नहीं लेकिन आज ये भारतीय हिन्दू धर्म में महत्वपूर्ण परम्परा के रूप में स्थान बना चुकी है।

चूंकि इनकी स्थापना उस समय पवित्र जल एकत्र करने के लिए की गई थी और वास्तव में ये आज भी अपने महत्व को बनाए हुए है लेकिन वो उद्देश्य आज पूरी तरह से पूरा नहीं कर पा रहे हैं। अब यहां लोग पिकनिक मनाने आते हैं और पवित्र तीर्थ को गंदा करने में तनिक भी संकोच नहीं करते। ये जल स्रोत हमारी सांस्कृतिक पहचान है अतः इनका संरक्षण अति आवश्यक है अन्यथा हमारी आने वाली पीढियों को हम क्या जवाब देगें।

सिस्टर निवेदिता गर्ल्स कॉलेज,
बीकानेर

नेहरू की राजपूताने की ऐतिहासिक स्वराज्य यात्रा

डॉ. देवेन्द्र कुल्हार

विश्व इतिहास में अनेक ऐसी ऐतिहासिक यात्राएँ प्रसिद्ध है जिसने देश के इतिहास को एक परिवर्तन के मोड़ पर खड़ा किया है। जैसे– फ्रांस की क्रान्ति में वर्साम मार्च, इटली में गैरी बाल्टी का "मार्च ऑफ द थाउजेंट" मुसोलिनी का "रोम मार्च", चीन का "लॉग मार्च", गाँधी जी का दाण्डी मार्च, नैल्सन मंडेला का "फ्रीडम मार्चेज" व मार्टिन लूथर किंग का वाशिंगटन मार्च प्रमुख है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में पण्डित नेहरू अहमदनगर जेल से रिहा (1945) होने के बाद ब्रिटिश भारत तथा देशी रियासतों में यात्राओं का एक दौर प्रारम्भ किया। इसी क्रम में वे अक्टुबर 1945 को राजपूताने में अपनी ऐतिहासिक स्वराज्य यात्रा की थी।

पण्डित नेहरू ने अपनी "स्वराज्य यात्रा" अलवर से प्रारम्भ की थी।[1] 20 अक्टुबर 1945 को नेहरू रेल से दिल्ली से चलकर अलवर पहुँचे। अलवर में स्थानीय कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने स्वागत किया और यह कहा कि यहाँ से राजपूताना आरम्भ होता है। इस नेहरू ने कहा कि राजपूताने और भारत अलग–अलग नहीं है। जो भारत में होगा उसका प्रभाव राजपूताना पर भी होगा। हम स्वतंत्रता के मंदिर के बहुत निकट पहुँच गये है परन्तु अभी भी हमें बहुत कुछ करना है। अलवर में नेहरू को एक हजार रूपये की थैली भेंट की गई।[2] 20 अक्टुबर को ही नेहरू जयपुर पहुँच गये और मोती डूँगरी रोड़ पर लक्ष्मीरामो उद्यान में ठहरे।

21 अक्टुबर को पण्डित नेहरू ने जयपुर इतिहास की सबसे विराट सभा में भाषण देते हुए कहा कि यह आखिरी मौका है जबकि मैं इन राजाओं को अंतिम चेतावनी दे रहा हूँ। हिन्दूस्तान की स्थिति शीघ्र ही पल्टा खाने वाली है, चाहे इसे कोई चाहता हो या नहीं। किसी को नही मालूम कि क्या कठनाईयाँ पेश आयेगी, मगर इसमें कोई संदेह नहीं कि इस बार हिन्दूस्तान मुकम्मिल आजादी प्राप्त कर के रहेगा। भारतीय तिरंगा दिल्ली के लाल किले पर फहरायेगा। अच्छा हो यदि राजा लोग स्वेच्छापूर्वक अपनी रियासतों में आवश्यक उलटफेर करले, बजाय इसके कि उन्हें और लोग ऐसा करने के लिए विवश करे।[3] इस सभा के बाद जयपुर राज्य प्रजामण्डल के सभापति

लादूराम जोशी ने पण्डित नेहरू को 31000/— हजार रूपये की थैली भेंट की।[4]

पण्डित नेहरू ने जयपुर में रियासती कार्यकर्ताओं को पथ प्रदर्शक करते हुए उन्होंने कहा कि प्रजा संगठन को मजबूत बनाओं............और.............पैसे के प्रलोभन से दूरी बनाए रखने की सलाह दी। प्रजामण्डल से अलग किसान सभाओं की स्थापना को अव्यवहारिक बताया। जागीर प्रथा को मुआवजा देकर समाप्त करने की सलाह दी। अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् की स्थायी समिति की बैठक में पण्डित नेहरू ने अध्यक्षता की और रियासतों में उत्तरदायी सरकारें बने व विधान निर्मात्री परिषद् में रियासती प्रतिनिधि प्रजा के द्वारा निर्वाचित हो इसका समर्थन किया।[5]

21 अक्टुबर को जयपुर राज्य के वित्तमंत्री और शिक्ष मंत्री राजा अमरनाथ अटल के यहाँ भोजन करने के बाद पण्डित नेहरू हीरालाल शास्त्री के साथ रात को वनस्थली पहुँचे। नेहरू के स्वागत के लिए एक सभा मंडप तैया किया गया था। इस सभा मंडप में दूर—दूर से आई उत्सूक जनता उनकी प्रतिक्षा कर रही थी। उस दिन की सभा वनस्थली विद्यापीठ की राष्ट्र सभा के अधिवेशन से प्रारम्भ हुई। छात्राओं ने सक्रिय राजनीति और राजकार्य का यथार्थ पाठ देने के लिए विद्यापीठ ने राष्ट्र सभा का संगठन का गठन किया था। इस राष्ट्र सभा संगठन के मंत्रीमण्डल में कुछ छात्राएँ गाँधीवादी तो कुछ समाजवादी की भूमिका में थी। दूसरे बहुमत में मार्क्सवादी थी। समय का अभाव होने के कारण नेहरू इस राष्ट्र सभा की पूर्ण कार्यवाही नहीं देख सके और उन्होंने इसके लिए खेद प्रकट किया। इसी समय अपने भाषण में उन्होंने कहा था कि "काश! मैं भी छोटी लड़की होता और यहाँ शिक्षा पाता।[6]

22 अक्टुबर को अन्तर्राष्ट्रीय लेखक संघ की भारतीय शाखा (पी.ई.एन) का उद्घाटन जयपुर दीवान मिर्जा इस्माइल द्वारा किया गया था। इस सम्मेलन की अध्यक्षता श्रीमति सरोजनी नायडू ने की थी। पण्डित नेहरू ने भी इस सम्मेलन में भाग लिया और अपने भाषण में कहा...........आज प्रांतीय भाषाएँ तथा साहित्य इसलिए आवश्यक है कि वे जनता के जीवन से संबंधित है और उससे प्रेरणा ग्रहण करते है।[7] इसके बाद नेहरू महाराजा जयपुर की गार्डन पार्टी तथा सर मिर्जा इस्माइल के डिनर में भी गये। महाराजा ने उनके साथ परिचित होने में गर्व अनुीाव किया और कुछ बातचीत की।[8] इस अवसर पर आजाद मोर्चे के नेता बाबा हरिशचन्द्र ने नेहरू की प्रेरणा से आजाद मोर्चा का विलय प्रजामण्डल में कर लिया था।[9]

22 अक्टुबर को नेहरू जयपुर से किशनगढ़ होते हुये शाम 6 बजे अजमेर पहुँचे। रात आठ बजे अजमेर के पोलो ग्राउण्ड में 75 हजार की

विशाल जन सभा को पण्डित नेहरू ने संबोधित किया। अजमेर के नागरिकों की ओर से पण्डित नेहरू को 11111/— रूपये की थैली भेंट की। तेज आंधी और बारिश में भी जनता उनको सुनने को डटी रही। अंत में बरसात से लाउड स्पीकर खराब हो जाने से विवश होकर यह सभा समाप्त करनी पड़ी।[10] अगले दिन स्थानीय समाचार पत्रों की मुख्य लाइने थी.......नर नाहर वीर जवाहर आया।[11] 23 अक्टुबर को सुबह 6 बजे राष्ट्रीय मुस्लिम नेता सैय्यद अब्बास अली की सदारत में सभा को संबोधित किया। इसके उपरान्त नेहरू पुष्कर गये जहाँ महन्तों ने स्वागत किया। इसके बाद क्रमशः अनासागर, बारादरी, मैगजीन फोर्ट व दरगाह शरीफ भी गये।[12]

उपरान्त नेहरू को मेयो कॉलेज से निमंत्रण दिया गया। यह अपने आप में एक ऐतिहासिक घटना थी क्योंकि इस कॉलेज के भूतपूर्व प्रिसिंपल को गाँधी टॉपी से चिढ़ थी। मेयो कॉलेज में अपने अंग्रेजीमें दिये भाषण में उन्होंने राजपूतों के सद्‌गुणों की चर्चा कीं इसके साथ कॉलेज में पढ़ने वाले भारतीय राजकुमारों को अनेक नेक सलाहें भी दी।[13] अंत में सभी के साथ चाय पार्टी लेकर विदा ली। अजमेर से पण्डित नेहरू नसीराबाद गये जहाँ उन्होंने आधे घण्टे का भाषण दिया। नसीराबाद से सात आठ बजे नेहरू ब्यावर पहुँचे। रात 9 बजे उन्होंने 25 हजार की जनता के सामने अपना प्रभावशाली भाषण दिया। जनता ने बड़ी शांति से उनका भाषण सुना। ब्यावर में सभा में जनता की ओर से 11151/— रूपये व गुजराती समाज द्वारा 501/— रूपये व मजदूर यूनियन की ओर से 51/— रूपये भेंट दिये गये।[14] इस प्रकार नेहरू को अजमेर मेरवाड़ा से कुल 28000/— रूपये भेंट मिले जिसमें से नेहरू ने 5202/— रूपये कमला नेहरू अस्पताल को व 2382/— रूपये आजाद हिन्द फौज डिफेन्स कमेटी को व 500/— रूपये राजबंदी सहायक समिति को व बाकी पैसे कांग्रेस को दे दिये।[15]

ब्यावर के बाद पण्डित नेहरू मारवाड़ की सीमा में घुसे। जहाँ उनका क्रमशः सैंदड़ा, बर्र, चण्डावल व सोजत सिटी में स्वागत हुआ।[16] सोजत रेलवे स्टेशन पर जोधपुर महाराजा के निकट संबंधी कर्नल मोहन सिंह भाटी ने महाराजा की तरफ से नेहरू का स्वागत किया।[17] अगले दिन 24 अक्टुबर की सुबह पण्डित नेहरू जोधपुर पहुँचे तो जोधपुर महाराजा ने राज्य के कर्मचारियों, स्कूलों, कचहरियों और कारखानों का अवकाश घोषित कर दिया। उस दिन शहर की हर दुकान पर राष्ट्रीय झण्डा लगाये गये थे। नेहरू को जुलुस निकालने के लिए महाराजा साहब ने अपनी चाँदी की रोल्सरॉय गाड़ी भी दी। नेहरू का जुलुस दो मील लंबा था।[18] स्थान—स्थान पर उनकों पुष्प मालाएँए पहनाई गई, फूल बरसाये गये। शहर में उनके स्वागत में बनाये गये

25 प्रवेशद्वारों का नाम एक नेता के नाम पर रखा गया था। बाजार के प्रमुख व्यापारियों ने नेहरू का पान, इलाइची और इत्र से स्वागत किया।[19]

दोपहर दो बजे दरबार स्कूल के हॉल में कार्यकर्ताओं की सभा में भाषण दिया।[20] कार्यकर्ताओं की सभा के बाद उसी स्थान पर मारवाड़ महिला परिषद् द्वारा आयोजित महिलाओं की सभा में पण्डित नेहरू ने पोने घण्टे तक बातचीत की। महिला परिषद् ने नेहरू को एक हजार रूपये की थैली भेंट की। कार्यक्रम इतना व्यस्त था कि महिलाओं की सभा से बाहर आते ही नेरू को जसवंत कॉलेज में विद्यार्थियों की सभा में भाषण देने के लिए जाना हुआ। मारवाड़ विद्यार्थी संघ की ओर से नेहरू को मानपत्र व एक हजार रूपये की थैली भेंट की। जोधपुर म्युनिसिपल बोर्ड ने नेहरू के सम्मान में विलिंगडन पार्क में एक कार्यक्रम रखा जिसमें जोधपुर महाराजा भी शामिल हुये थे। यही पर ही जोधपुर महाराजा ने विशेष अनुरोध से एक बार अपने साथ (छीतर पैलेस में) भोजन के लिए निमंत्रित किया। पण्डित नेहरू ने यह न्यौता स्वीकार कर लिया।[21]

रात आठ बजे जोधपुर के स्टेडियम ग्राउण्ड में पण्डित नेहरू का सार्वजनिक भाषण हुआ। करीब एक लाख लोग उपस्थित थे। बारह फीट ऊँचा एक रंगमंच बनाया गया था जहाँ पण्डित नेहरू, श्रीमति इंदिरा गाँधी व जयनारायण व्यास बैठे थे। स्टेडियम के चारों ओर तिरंगे झण्डे फहरा रहे थे। पण्डित नेहरू की वेदी भी तिरंगे झण्डे से सजाई गयी थी। नेहरू ने जोधपुर की जनता को संबोधित किया। इसके उपरांत वे जोधपुर महाराजा के यहाँ खाना खाने के लिए छीतर पैलेस (वर्तमान उम्मेद भवन) में गये जहाँ वे रात्री 12 बजे तक रहे। इसी समय जोधपुर महाराजा ने कमला नेहरू अस्पताल के लिए 25000/– रूपये भेंट दिये। दूसरे दिन नेहरू को विदा करने के लिए महाराजा साहब नेहरू के निवास स्थान "सागी का बंगला" पर आये।[22] लगभग आधे घण्टे राज्य की राजनैतिक स्थिति पर विचार किया। महाराजा साहब ने नेहरू की सलाह पर अपना प्रधानमंत्री सर डोनाल्ड फील्ड के स्थान पर श्री. एस. वैंकटाचारी को नियुक्त किया।[23] पण्डित नेहरू अपने मित्रों के साथ मोटर वाहन से सोजत रोड़ गये। जहाँ गाँव–देहातियों की सभा में पण्डित नेहरू को पहनाई गई सोने की लूँग जोड़ नीलाम की गई जिसे श्री नरहरिदास लूँकड़ ने बड़ी कीमत पर खरीदा था।[24] सोजत रोड़ रेलेवे स्टेशन की सभा उनकी स्वराज्य यात्रा की अंतिम सभा रही। इसके अलावा उनकी पूरी यात्रा में उनकी पुत्री प्रियदर्शनी (इंदिरा गाँधी) साथ रही थी।

राजपूताना के निवासियों के लिए यह सौभाग्य का विषय था कि स्वतंत्र भारत का भावी प्रधानमंत्री व भारतीय स्वाधीनता के यौद्धा पण्डित नेहरू को

अपने बीच में पाया। पण्डित नेहरू भारतीय स्वाधीनता के जीवित प्रतिक थे। नेहरू की यह स्वराज्य यात्रा ने राजपूताने में जो जागृति और एकता की भावना को जगाया था वह चिरस्थायी साबित हुई राजपूताना भी स्वाधीनता के अपने लक्ष्य की ओर तेजी से कदम बढ़ाने लगा। जयपुर–जोधपुर के महाराजा भी हवा का रूख पहचान रहे थे। इसलिए उनके आगमन के सम्मान में दावत दी व राज्य अधिकारियों को उपस्थित रहने का निर्देश भी दिये। जोधुपर महाराजा ने तो उनके आगमन में राज्य का सार्वजनिक अवकाश की घोषणा करना उस समय के रियासती माहौल में अकल्पनीय था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. झाबरमल शर्मा (1981), राजस्थान और नेहरू परिवार, ज्योति प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 120
2. झाबरमल शर्मा (1981), पूर्वोक्त, पृ. 120–121
3. नव ज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 6
4. झाबरमल शर्मा (1981), पूर्वोक्त, पृ. 116
5. नव ज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 5 नवम्बर 1945, पृ. 2
6. देशदूत, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 20 फरवरी 1946, पृ. 6
7. नव ज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 5 नवम्बर 1945, पृ. 8
8. झाबरमल शर्मा (1981), पूर्वोक्त, पृ. 116
9. बी. एल. पनगड़िया (1985), राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम, पृ. 87
10. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 3
11. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, वर्ष–6, अंक 36, पृ. 1
12. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 3
13. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 7
14. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 3
15. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 3
16. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 26 अक्टुबर 1945, पृ. 10
17. बी. एल. पनगड़िया (1985), पूर्वोक्त, पृ. 77
18. देशदूत, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 18 नवम्बर 1945, पृ. 15
19. नवज्योति, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 5 नवम्बर 1945, पृ. 10
20. नवज्योति, वहीं
21. देशदूत, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 18 नवम्बर 1945, पृ. 15

22. वहीं
23. बी. एल. पनगड़िया (1985), पूर्वोक्त, पृ. 77
24. देशदूत, हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र, 18 नवम्बर 1945, पृ. 15

व्याख्याता इतिहास
हरियाणा शिक्षा विभाग

मद्यपान : युवाओं की एक गंभीर समस्या
(Alcoholism: A Serious Problem of the Youth)

डॉ. सुरेन्द्र भास्कर

भारत में युवाओं में मद्यपान या शराबखोरी एक गंभीर समस्या है, जिसके स्वास्थ्य, सामाजिक और आर्थिक प्रभाव बहुत ही व्यापक हैं। मद्यपान एक सामाजिक समस्या है जो युवाओं में एक फैशन के रूप में निरन्तर बढ़ती जा रही है है। कभी पार्टी तो कभी तनाव को दूर करने के नाम पर युवाओं का शराब पीना बहुत ही आम हो गया है। कुछ युवा स्टेटस सिंबल मानकर शराब का सेवन शुरू करते हैं जिसकी बाद में उन्हें लत पड़ जाती है। **गुरूराज**[1] के अनुसार भारत में 13 से 15 वर्ष की आयु में युवा शराब का सेवन प्रारम्भ कर देता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) की एक रिपोर्ट के अनुसार, विश्व में शराब सालाना 26 लाख लोगों की जान ले रही है, और युवा वर्ग सबसे अधिक प्रभावित हो रहा है। जहां वैश्विक स्तर पर Gen-Z (जेनरेशन–जेड) में शराब छोड़ने का चलन बढ़ रहा है, वहीं भारत में शराब की खपत में तेजी से वृद्धि का अनुमान है।[2]

मद्यपान को विगत वर्षों में नैतिक समस्या और सामाजिक अनुत्तरदायित्व का लक्षण माना जाता था लेकिन वर्तमान में इसका सेवन शान समझा जाता है जो हर दूसरे युवा को अपनी गिरफ्त में ले रखा है। यह एक प्रकार का दीर्घकालीन विचलित व्यवहार है जिसमें व्यक्ति का सामाजिक विघटन और नैतिक पतन के साथ गंभीर स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। **जॉनसन**[3] ने मद्यपान को परिभाषित करते हुए बताया है कि यह वह स्थिति है जिसमें एक व्यक्ति मदिरा लेने की मात्रा पर नियन्त्रण खो बैठता है जिससे वह पीना आरम्भ करने के पश्चात उसे बंद करने में सदैव असमर्थ रहता है। फेयरचाइल्ड ने शराब की असामान्य बुरी आदत को ही मद्यपान माना है। शराब के अलावा तम्बाकू, भांग, गांजा, अफीम, चरस, ताड़ी, हैरोइन, ब्राउन सुगर, कोकीन आदि अन्य नशीले पदार्थ भी व्यक्ति को इस राह की ओर धकेलती हैं। ये आम तौर पर अवैध दवाएँ हैं जो किसी व्यक्ति की मनोदशा और व्यवहार को प्रभावित करती हैं। मद्यपान एवं मादक पदार्थो का सेवन में काफी समानताएं है। दोनों में ही रासानियक पदार्थों के माध्यम

से अल्पकाल के लिए सुखद मनोदशा प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। दोनों ही स्थितियों के परिणाम घातक हो सकते है। वर्तमान समय में शराब और मादक पदार्थो का सेवन एक सामाजिक समस्या के साथ–साथ बड़ी चिकित्सा समस्या बन गई है जिनके आदतन व्यक्तियों को दंड की अपेक्षा चिकित्सकीय सलाह की अधिक आवश्यकता होती है। भारत में मादक पदार्थ के उपयोग से संबंधित वर्ष 2019 में जारी अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान रिपोर्ट के अनुसार शराब भारत में नशे हेतु सर्वाधिक उपयोग में लिया जानो वाला पदार्थ है।

शराब या मदिरा व्यक्ति के स्नायुतंत्र पर शमक या अवरोधक के रूप में प्रभाव डालती है। आमतौर पर इसका प्रयोग अनियंत्रित और आदतन बाध्यकारी रूप से शराब का सेवन करने के लिए होता है। इससे व्यक्ति का स्वंय पर नियंत्रण कम हो जाता है और वह स्वच्छंद महसूस करने लग जाता है। इससे कृत्रिम उत्तेजना अथवा कृत्रिम अचेतन अथवा न्यून चेतना की स्थिति उत्पन्न होती है। लगातार मदिरा के सेवन से व्यक्ति को गंभीर स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को सामना करना पड़ता है। प्राकृत ग्रंथ दशवैकालिक सूत्र में मदिरापान का निषेध करते हुए कहा गया है कि वह लोलुपता, छल, कपट, झूठ, अपयश, अतृप्ति आदि दुर्गुणों को पैदा करने वाला और दोषों को बढ़ाने वाला है। अंतकृतदशा सूत्र के अनुसार शराब उच्छृंखलता पैदा करती है। मिस्र और बेबीलोन जैसी महान सभ्यताओं के अंत में शराब के दुरूपयोग का बड़ा योगदान है। इसी प्रकार महाभारत के यदुकुल का सर्वनाश भी मद्यपान के कारण ही माना जाता है। भारतीय संस्कृति में मद्यपान को कभी भी उचित नही माना गया है। यद्यपि शास्त्रों में सोमरस के रूप में इसका उल्लेख किया गया है लेकिन इसे कभी भी सामाजिक रूप से स्वीकार नहीं किया गया है।[4] भारत में मद्यपान एक समस्या है जबकि पश्चिमी देशों में इसे एक शिष्टाचार माना गया है। अंग्रेजों के भारत में आगमन के पश्चात शराब (मद्यपान) का प्रचलन समाज में बहुत अधिक बढा है जो आज सरकार की टैक्स के माध्यम से आय संग्रहण का प्रमुख साधन बन गया है। आज भारत जैसे विकासशील तथा आध्यात्मिक देश में युवाओं में नशे की बढ़ती प्रवृत्ति किसी महामारी से कम नहीं है। भारत युवाओं का राष्ट्र है, ऐसे में विश्व–निर्माण की अद्भुत क्षमता रखने वाले युवा अपने जीवन का स्वर्णिम समय मद्यपान में नष्ट कर रहे है। मद्यपान का व्यक्ति के तन, मन और धन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। निरन्तर नशे से व्यक्ति की अन्तर्शक्ति क्षीण हो जाती है और वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

मद्यपान के कारण (Cause of Alcoholism)

मद्यपान शराब से जुड़ी समस्याओं के लिए विस्तृत शब्द है। इससे व्यक्ति का मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य, सामाजिक संबंध और आर्थिक जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है। सामाजिक बुराई के रूप में प्रचलित मद्यपान ने आज चिकित्सा की दृष्टि से गंभीर बीमारी का रूप धारण कर लिया है। मद्यपान के प्रमुख कारण निम्न है–

1. समाज में कई व्यक्ति अपनी पारिवारिक समस्याओं से उत्पन्न मानसिक चिन्ताओं को दूर करने के लिए (मद्यपान) शराब का सेवन करते है।

2. व्यक्ति के चारों ओर का सामाजिक माहौल या वातावरण भी उसे इस लत का शिकार बना देता है।

3. पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से वर्तमान में शराब का सेवन करना एक उच्च सामाजिक स्थिति का प्रतीक या फैशन बन गया है। इस प्रतीकात्मक स्तर को बनाए रखने के लिए भी व्यक्ति शराब का सेवन करने लग गया है।

4. व्यक्ति का स्वंय पर नियंत्रण नहीं होने के कारण भी मद्यपान का शिकार हो जाता है।

5. कई व्यक्ति क्षणिक सुख और संवेदनात्मक आनन्द प्राप्त करने के लिए मदिरा का सेवन करना प्रारम्भ कर देते है।

6. गन्दें आवास और मजोरंजन के साधनों का अभाव।

7. हर स्थान पर शराब का आसानी से उपलब्ध होना भी इसके सेवन को बढ़ाने में योगदान दिया है।

8. मित्र मंडली के कारण बुरी संगति के लोगों के प्रभाव में आकर भी व्यक्ति मद्यपान का सेवन करना प्रारम्भ कर देता है।

9. चार्वाक दर्शन खाओं, पीओ और मौज करो की नीति।

10. कुसमायोजन और विघटित व्यक्तित्व ने भी मद्यपान की समस्या को बढ़ाया है। तनाव, अवसाद और अकेलापन से मद्यपान की लत अधिक पड़ती है।

11. यदि किसी परिवार में माता–पिता या कोई अन्य सदस्य पहले से शराबी है तो उस परिवार के बच्चों का मद्यपान करने की संभावना बढ़ जाती है।

12. सिनेमा, मीडिया और विज्ञापनों के नशे को प्रोत्साहित करने वाले दृ श्य भी मद्यपान को बढ़ावा देते है।

13. नैतिक शिक्षा का अभाव एवं सामाजिक संस्थानों के कमजोर होने से भी मद्यपान की समस्या में बढ़ोत्तरी देखने को मिली है।

मद्यपान के दुष्परिणाम (Adverse Effect of Alcoholism)

मद्यपान का अर्थ शराब का सेवन करने वाले व्यक्ति के स्वास्थ्य, व्यक्तिगत संबंध और सामाजिक स्थिति के बिगड़ने से लगाया जाता है। महात्मा गांधी के अनुसार, शराब की लत शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आर्थिक रूप से मनुष्य को बर्बाद कर देती है एवं शराब के नशे में मनुष्य दुराचारी बन जाता है। मद्यपान की वजह से पीने वाले व्यक्ति के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है और इस आदत से जीवन मे नकारात्मक सामाजिक परिणाम देखने को मिलते है। शेक्सपीयर के अनुसार 'शराब का जाम चेतना, बुद्धि, प्राण और सम्पदा को हरण करने वाले जहर की अपेक्षा कहीं अधिक भयंकर है।' मद्यपान से होने वाले प्रमुख दुष्प्रभाव निम्न है–

1. मद्यपान का सेवन करने पर व्यक्ति की विचार, चिन्तन और स्मरण शक्ति अवरुद्ध हो जाती है। इससे वह अपने विवेक का इस्तेमाल करने में असमर्थ हो जाता है।

2. मद्यपान के नशे में चूर व्यक्ति अपना होश भी खो बैठता है और अनर्गल बकता रहता है।

3. मद्यपान से गंभीर मानसिक विकृति एवं मनोरोग हो जाते है। इससे लगातार सामाजिक अलगाव के स्थिति में कई बार शराबी आत्म हत्या भी कर लेता है।

4. मद्यपान करने वाले व्यक्ति को अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। शराब के अधिक सेवन से लिवर खराब होना, पेट का कैंसर, तंत्रिका तंत्र का कमजोर होना, मानसिक अस्थिरता, यकृत खराब होना, हृदय रोग, बेचौनी, सिरदर्द, हाथ पैरों की कंपन आदि रोग हो जाते है।[5]

5. मद्यपान करने वाले व्यक्ति के परिवार में कलह की स्थिति बनी रहती है। इससे घरेलू हिंसा की घटनाओं में निरंतर वृद्धि हो रही है।

6. मद्यपान एक सामाजिक कलंक है। ऐसे व्यक्ति को समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है।

7. निरन्तर मद्यपान करने से सोचने–समझने की शक्ति नष्ट हो जाती है। इससे व्यक्तित्व का नुकसान होता है।

8. मद्यपान करने वाले व्यक्ति का चारित्रिक विघटन हो जाता है। नशे में ऐसे व्यक्ति चोरी करने, डकैती डालने, बलात्कार करने जैसे अपराध को अंजाम दे देते है।

9. मद्यपान मर्यादा, संयम, विवेक, शिष्टाचार, अनुशासन जैसे मानवोचित गुणों को नष्ट करके अराजकता को जन्म देती है।

10. शराब पीने वाले व्यक्ति की कार्यक्षमता घट जाती है और उसे आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है।

11. मद्यपान से दुर्घटनाओं में वृद्धि होती है। युवाओं में नशा करके गाडी चलाने का प्रचलन अधिक होने से

मद्यपान का उपचार (Treatment of Alcoholism)

किसी भी समाज या राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए उसके युवा वर्ग को बचाना अत्यावश्यक है। इतिहासकार टॉयन्बी के अनुसार 'अति प्रचीनकाल से अस्तित्व में आई कुल इक्कीस संस्कृतियों में से उन्नीस संस्कृतियों के पतन का कारण मद्यपान है।' व्यक्ति की प्रबल इच्छाशक्ति तथा परिवार के सहयोग तथा चिकित्सकों के सतत् प्रयास से सफलता पूर्वक इसका इलाज संभव है। मद्यपान एक बुरी आदत है जिसे व्यक्ति चाहते हुये भी नही छोड़ पाता है फिर भी निम्न प्रकार के कुछ प्रयासों से इस लत पर विजय पाई जा सकती है।

1. व्यक्ति स्वंय अपने लक्ष्य निर्धारित करें और उन्हें प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शक बनाएं।

2. तनावमुक्त जीवन जीये और पर्याप्त आराम करें।

3. सुबह–शाम अभ्यास और योगा आदि करें।

4. स्वंय पर नियत्रंण रखें और हार नहीं मानें।

5. अपने परिवार एवं मित्रों के साथ क्वालिटी समय का आनन्द लें। माता–पिता को स्वस्थ पारिवारिक वातावरण का निर्माण करते हुए अपने बच्चों के साथ संवाद बढ़ाना चाहिए।

6. अपने मन की बात और योजनाओं को पारिवारिक सदस्यों एवं विश्वस्त मित्रों के साथ साझा करें।

7. मद्यपान करने की आदत को अन्य रचनात्मक शौक से भी स्थानापन्न करें।

8. भ्रष्टाचार और लालच से दूर रहें।

मद्यपान में समूह थेरेपी और मनोचिकित्सा की सलाह और परामर्श बहुत कारगर है। मनश्चिकित्सा केन्द्रों में नशा विमुक्ति केन्द्र होते है जहाँ डी–टोक्सीफिकेशन द्वारा शराब छुड़ाने तथा उसके उपरांत मोटिवेशन थैरपी, फिजियोथैरपी तथा ग्रुप थैरपी द्वारा इससे निजात पाने की कोशिश की जाती है। मद्यपान करने वाले व्यक्ति को अपनी खुराक पर संयम रखना चाहिए। मद्यपान में एंटाब्यूज औषधि बहुत ही उपयोगी है जो मदिरा सेवन करने वाले को आवर्तन (पूर्वावस्था प्राप्ति) के विरूद्ध रोकती है। मदिरा के व्यसनियों को निर्विषीकरण (Detoxication) के लिए चिकित्सकों की निगरानी में देखभाल और निरीक्षण की आवश्यकता होती है।

मद्यपान का समाधान (Solutions of Alcoholism)

मद्यपान का सेवन करना एक सामाजिक बुराई है जिससे समाज की रक्षा करना बहुत ही आवश्यक है। मद्यपान की बढ़ती हुई प्रवृत्ति की रोकथाम हेतु किसी एक विभाग या सरकार द्वारा किये गए एकल प्रयास कदापि सफल नहीं हो सकते हैं। इसके लिए आम जनता, सरकार और गैर सरकारी संस्थाओं के राजनैतिक, प्रशासनिक व सामाजिक स्तर पर समेकित प्रयास की आवश्यकता है। मद्यपान मुक्त समाज की स्थापना के लिए हम सभी को अपनी सामाजिक जिम्मेदारी समझते हुए सतत प्रयास करने होगें।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 47 में इस बात का उल्लेख किया गया है की राज्य चिकित्सा संबंधी उपयोग को छोड़कर उन मादक पेयों और औषधियों के प्रचलन पर रोक लगाने का प्रयास करेंगे जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। किसी भी व्यक्ति द्वारा मादक पदार्थ के उत्पादन, बिक्री, क्रय, परिवहन, भंडारण, और उपभोग को प्रतिबंधित करने के लिए सरकार ने 1985 में नार्कोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट (NDPS) लागू किया। इस अधिनियम में तीन बार (1988, 2001 और 2014 में) संशोधन किया गया है। इसके अलावा केन्द्र सरकार द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रम के तहत 'नशा मुक्त भारत अभियान' को शुरू करने की भी घोषणा की गई है। मादक पदार्थों के खतरे पर नियंत्रण हेतु भारत सरकार ने अंतर्राष्ट्रीय संधियों पर हस्ताक्षर कर रखे है। वर्तमान में गुजरात और बिहार में पूर्ण शराबबंदी लागू है। इस नीति को अन्य राज्यों में लागू करने की आवश्यकता है। राजस्थान में पूर्व विधायक गुरूशरण छाबडा और उनकी पुत्र वधु पूजा छाबडा ने राज्य में पूर्ण शराबबंदी को लेकर आन्दोलन कर चूके है। राजस्थान को नशा मुक्त

करने के लिए सरकार ने 2015 में नया सवेरा नामक एक योजना का श्री गणेश किया था। वर्ष 2016 भारत सरकार द्वारा नार्को–कोऑर्डिनेशन सेंटर का गठन किया गया और राज्य में 'नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो' की मदद के लिये 'वित्तीय सहायता योजना' को पुनर्जीवित किया गया।

मद्यपान की समस्या से निपटने के लिए सरकार को स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से इसके बारे में जागरूकता का संदेश प्रसारित करना चाहिए। इसके साथ ही नशे से पीड़ितों की पहचान कर उन्हें पुनर्वास करने जैसी सेवाएं प्रदान करनी चाहिए। ऐसे व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा में लाने हेतु शैक्षिक कार्यक्रमों का आयोजन करना चाहिए। सरकार द्वारा संस्थागत गतिविधियों के लिए वित्तीय सहायता भी प्रदान करनी चाहिए ताकि सामुदायिक कार्य में लोग अधिक से अधिक हिस्सा ले सकें।

संदर्भ पुस्तकें

1. Gururaj G, Varghese M, Benegal V, Rao G, Pathak K, Singh L and Singh RL (2016): National Mental Health Survey of India, 2015–16: Summary. *Bengaluru, National Institute of Mental Health and Neuro Sciences, NIMHANS Publication* (128)
2. Prasad, Raekha (2009): “Alcohol use on the rise in India”, *The Lancet*, 373(9657): 17-18
3. Johnson, E.H. (1973): Social Problems of Urban Man, By Homewood, Ill.: Dorsey Press, Inc.
4. गुप्ता, एम.एल., शर्मा डी.डी. (2001) : समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
5. Hall WD, Patton G, Stockings E, Weier M, Lynskey M, Morley KI and Degenhardt L (2016): Why young people's substance use matters for global health. The Lancet. Psychiatry 3, 265–279.

तहसीलदार,
मंडावा

युगीन युगीन पाटन (सीकर)

मदन लाल मीना
ओमपाल कुमार कालावत

सारांश

पाटन–नीमकाथाना–कोटपूतली क्षेत्र को तोरावाटी या तंवरावाटी के नाम से जाना जाता है। तोरावाटी क्षेत्र तोमरवंशी राजपूतों का राज्य रहा है। आरम्भ में यहां परमार, चौहान एवं सांखला शासकों का शासन रहा है। तंवर वंष के अनंगपाल तोमर–प्रथम ने 9वीं शताब्दी में दिल्ली को अपनी राजधानी तथा बाद में अनंगपाल द्वितीय ने सन् 1050 में दिल्ली के शासन की बागडोर अपने हाथों में लेकर शेखावाटी तक अपने राज्य का विस्तार किया। इस क्षेत्र में प्रस्तर युगीन मानव मध्यपाषाण काल युग से सीधा ताम्र प्रस्तर युग में प्रवेश करता है। गणेश्वर पुरास्थल उत्खनन से स्पष्ट हुआ है कि इस क्षेत्र के मानव ने अपना विकास क्रम जारी रखा, जिसकी पुष्टि शैलाश्रयों में चित्रित अंकन से होती है। इस क्षेत्र में सोहनपुरा (पायगा) एवं भीतरो (डोकन) के शैलाश्रयों से प्रापत चित्रांकन तत्कालीन मानव समाज के ठोस प्रमाण हैं। जिनमें सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की जानकारी मिलती है। इस क्षेत्र में मध्य पाषाण कालीन पुरास्थल नदी के तटवर्ती क्षेत्र या पहाड़ी तलहटी के आस–पास अवस्थित हैं। इन पुरास्थलों से चर्ट, बगेट, क्वार्टजाईट, चाल्सीडोनी आदि प्रस्तर पर निर्मित उपकरण प्रतिवेदित हैं। खोखरा (बल्लूपुरा), हरिपुरा इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण पुरास्थल हैं। उपकरणों में मुख्य रुप से ब्लैड, फ्लेक, क्रोड (कोट), ब्लेण्टेड ब्लैड, लयुनेट, ट्रायंगल, टेपीज एवं प्वाइंट इत्यादि हैं।

मुख्य शब्द– तोरावाटी, ताम्र प्रस्तर युग, शैलाश्रय, पुरास्थल, प्रागैतिहासिक युग, विदारणी (स्क्रेपर), क्लेवर, हस्तकुठार (हैंडएक्स), ब्लैड, फ्लेक, क्रोड (कोट), ब्लेण्टेड ब्लैड, लयुनेट, ट्रायंगल, टेपीज एवं प्वाइंट आदि।

प्रस्तावना

पाटन क्षेत्र प्रारम्भ से ही मानव के अधिवास का केन्द्र बिन्दु रहा है। मानव की प्रारम्भिक अवस्था में यायावरी जीवन तथा उसके बाद शिकारी जीवन की अवस्था से लेकर आधुनिक काल तक के साक्ष्य क्षेत्र में चारों ओर

छितरे हुऐ मिलते हैं। प्रागैतिहासिक युग में मानव ने अपने उपकरणों का निर्माण सर्वसुलभ प्रस्तर खण्डों से किया। पाटन क्षेत्र में सोहनपुरा, पाटन, भीतरो (डोकन) से पैबल उपकरण प्रतिवेदित हैं। इस युग में मानव पूर्णतः प्रकृति पर आश्रित था। वह सामान्यतः वन्य क्षेत्र में सुलभ कंद, मूल एवं फलों से अपनी उदरपूर्ति करता था। छांयादार वृक्षों के नीचे या पेड़ों पर, नदियों की कगारों तथा पर्वतों की कन्दराओं में निवास करता था। सम्भवतः मानव ने सुरक्षित एवं सुविधा सम्पन्न क्षेत्र का चयन किया होगा। उसके द्वारा शैलाश्रयों को भी आश्रय स्थल बनाया गया होगा।

राजस्थान के सीकर जिले में पाटन कस्बा, नीमकाथाना तहसील में 27. 490 उत्तरी अक्षांश तथा 75.580 पूर्व देशान्तर पर स्थित है। यह जिला मुख्यालय से लगभग 105 किलोमीटर पूर्व की ओर तथा नीमकाथाना से 25 किलोमीटर की दूरी पर बसा हुआ है। पाटन कस्बा राजस्थान–हरियाणा की सीमा पर स्थित हैं।

मध्यपुरा प्रस्तर युग में प्रस्तर उपकरणों का निर्माण तत्कालीन मानव ने वन्य पशुओं से अपनी रक्षा करने एवं शिकार करने के उद्देश्य से निर्मित किये। ऐसे उपकरण सोहलपुरा, रैला, पाटन, बागेश्वर से प्राप्त हुऐ हैं। उपकरणों में मुख्यतः विदारणी (स्क्रेपर), क्लेवर, हस्तकुठार (हैंडएक्स) आदि के विविध प्रारुप मिलते हैं, जो क्वार्टजाईट प्रस्तर पर निर्मित हैं।

इस क्षेत्र में मध्य पाषाण कालीन पुरास्थल नदी के तटवर्ती क्षेत्र या पहाड़ी तलहटी के आस–पास अवस्थित हैं। इन पुरास्थलों से चर्ट, बगेट, क्वार्टजाईट, चाल्सीडोनी आदि प्रस्तर पर निर्मित उपकरण प्रतिवेदित हैं। खोखरा (बल्लूपुरा), हरिपुरा इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण पुरास्थल हैं। उपकरणों में मुख्य रुप से ब्लैड, फ्लेक, क्रोड (कोट), ब्लेण्टेड ब्लैड, लयुनेट, ट्रायंगल, टेपीज एवं प्वाइंट इत्यादि हैं।

इस क्षेत्र में प्रस्तर युगीन मानव मध्यपाषाण काल युग से सीधा ताम्र प्रस्तर युग में प्रवेश करता है। गणेश्वर पुरास्थल उत्खनन से स्पष्ट हुआ है कि इस क्षेत्र के मानव ने अपना विकास क्रम जारी रखा, जिसकी पुष्टि शैलाश्रयों में चित्रित अंकन से होती है। इस क्षेत्र में सोहनपुरा (पायगा) एवं भीतरो (डोकन) के शैलाश्रयों से प्रापत चित्रांकन तत्कालीन मानव समाज के ठोस प्रमाण हैं। जिनमें सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन की जानकारी मिलती है।[1]

शैलाश्रय पुरास्थल

शैलाश्रय–1

सोहनपुरा[2]– यह शैलाश्रय पहाड़ी के निम्न भाग में स्थित है। स्थानीय लोग इसे 'डूंडा बैल की ढ़ाढ़' कहते हैं। यह शैलाश्रय उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पष्चिम की ओर 46.5 मीटर विस्तृत है। यह उत्तर–पश्चिमाभिमुखी शैलाश्रय है। पहाड़ी के ऊपरी भाग से आने वाले पानी के प्रवाह ने इस शैलाश्रय को लगभग मध्य से दो भागों में विभाजित कर दिया है। इसका उत्तरी–पूर्वी भाग 24 मीटर तथा दक्षिण–पश्चिमी भाग 22.5 मीटर लम्बा है। यह शैलाश्रय 9 मीटर से 9.45 मीटर तक ऊंचा है तथा 2.55 मीटर से 4 मीटर तक गहरा है। शैलाश्रय के ऊपरी मध्य भाग में जल प्रवाह के कारण एक छोटा कुण्ड भी बन गया है, जिसमें ग्रीष्म काल में भी पानी की उपलब्धता बनी रहती है। पानी के बहाव के कारण चित्रों को भी नुकसान हुआ है। शैलाश्रय के उत्तरी भाग में कहीं–कहीं चित्रण हेतु लाल रंग का प्रयोग किये जाने के प्रमाण हैं, लेकिन चित्रण में अभिप्राय अस्पष्ट है। दक्षिण अर्द्धांष की अपेक्षा इसका अधिक उपयोग किया जाता रहा है। इसलिए इसकी भित्ति पर जगह–जगह उकेरे गए नाम एवं अन्य गतिविधियों से भी चित्रण सुरक्षित नहीं रह पाया हैं। इस भाग में शैलाश्रय की चट्टान का क्षरण भी अधिक हुआ है। इस के दक्षिण अर्द्धांश में किये गये चित्रण में विषय एवं शैली की दृष्टि से पर्याप्त विविधता है। इसके उत्तरी भाग में जहां से यह दो भागों में विभक्त हुआ है, अपेक्षाकृत ऊंचाई पर लाल रंग से आपूरित उत्तराभिमुखी पशु के पार्श्व दृश्य भाग का चित्रांकन है। इस चित्रांकन का आधे से अधिक अग्रभाग पेंटिनेशन के कारण अदृश्य है। शेष पिछले भाग में पैर, पुंछ एवं शरीर का कुछ भाग स्पष्ट दिखाई देता है। इस पष्च भाग में एक समान लाल रंग से आपूरण किया गया है। टांगों को पृथक–पृथक अंकन नहीं किया गया बल्कि नीचे से 'V' आकार की आकृति को आपूरित करके दोनों पैरों को प्रतीकात्मक रुप से अभिव्यक्त किया गया है।

चित्र के पीछे अपेक्षाकृत कम ऊंचाई पर शैलाश्रय के उभरे भाग पर लाल रंग के बिन्दुओं से अंकित एक सुन्दर लम्बे वृषभ के पार्श्व दृश्य भाग का चित्रण है। यह वृषभ दक्षिणभिमुखी है तथा शैलाश्रय की सतह से समानान्तरण पूर्ण स्थिर भावयुक्त चित्रित किया गया है। यह अग्र पैरों से सींग तक 14 से. मी. ऊंचा है। अग्र पैरों से कुबड़ तक ऊंचाई 11 से.मी. है। मुख्य शरीर की मोटाई 3.5 से.मी. एवं गर्दन 2.5 से.मी. मोटी है। कूबड़ पीठ की रेखा से 1.5 से.मी. ऊंचा है। वृषभ के सींग 'ट' आकार में जिसके ऊपरी सिरे बाहर की ओर एक–दूसरे के विपरीत घुमाव लिए हुए अंकित हैं। कूबड़ एवं सींग की

रेखाएं पूर्णतः आपूरित हैं। सींगों की लम्बाई 7.9 से.मी है, जिसमें 6 से.मी. सीधी रेखा से निर्मित है, शेष भाग बाहर की ओर मुड़ा हुआ है। सींग 0.8 से. मी. मोटी रेखा से अंकित किये गये हैं। वृषभ की पूंछ का चित्रण प्रभावी ढ़ंग से किया गया है। इसका अंकन पूर्णतः बिन्दु (डॉट) निर्मित सरल रेखा से किया गया है, जो पश्च भाग में शरीर से क्रमशः पीछे दूर होती गई है, लेकिन अन्तिम सिरे के बालों का गुच्छ सबल रेखाएं खींचकर बनाया गया है। इस गुच्छ में 5 पतली सरल रेखाएं दोनों ओर पूंछ की कुल लम्बाई 13.2 से. मी है। इसमें 4.1 से.मी. लम्बा गुच्छ है। इस गुच्छ में 4.1 से.मी. लम्बी पतली रेखाएं हैं। पैरों का चित्रण पृथक–पृथक नहीं किया गया है। दोनों पैरों का 'V' आकार से प्रतिकात्मक चित्रांकन है। अग्र एवं पश्च पैरों को एक जैसी शैली में चित्रित किया गया है। नीचे खुरों का भाग कोणात्मक नहीं है। अग्र एवं पश्च पैरों का भाग 'U' आकार का 1.8 से.मी. मोटा है।

इस शैलाश्रय में कम ऊंचाई पर उपरोक्त वृषभ के नीचे लाल रंग से आपूरित एक गतिषील हिरण के पार्ष्व भाग का चित्रण है। यह हिरण दक्षिणाभिमुखी है। इसका रंग वृषभ के अंकन प्रयुक्त रंग से हल्का लाल दिखाई देता है। इसके ऊपर आंशिक पैंटिनेशन है। यह चित्रण 13.2 से.मी लम्बा एवं 10.5 से.मी. ऊंचा है। पष्च भाग की ऊंचाई 4.4 से.मी. तथा मुख्य शरीर का भाग 2.4 से.मी. मोटा है। इसके दोनों श्रृंग गहरी लहरों युक्त 6.3 से.मी. लम्बे हैं, जिनमें 5 मोड हैं तथा पूर्णतः आपूरित हैं। गर्दन एवं श्रृंगों की विशिष्ट स्थिति से हिरण में जागरुकता या चौकन्नेपन के भाव का बोध होता है। पैरों के अंकन में वृषभ के समान 'V' आकृति की शैली का प्रयोग किया गया है। अग्र एवं पश्च पैरों को वृषभ के पैरों के समान ही अंकित किया गया है, इनके मध्य 6.5 से.मी. की दूरी है।

इस हिरण के ऊपरी भाग में कर्षण पद्धति द्वारा वृषभाकृति का अंकन है, जिसके पार्ष्व दृष्य भाग का दक्षिणाभिमुखी अंकन किया गया है। यह वृषभ का प्रतिकात्मक अंकन है। इसमें शैलाश्रय की सतह पर कठोर उपकरण द्वारा कर्षण (खुरचकर) करके बाह्म रेखाओं का अंकन किया गया है। यह वृषभ 55 से.मी. लम्बा तथा 16 से.मी. ऊंचा है। इसके सींग 'V' आकृति में सीधे 3.8 से.मी. लम्बे हैं। पैरों के अंकन में रंग से निर्मित वृषभ के पैरों से समानता स्पष्ट दिखाई देती है। दोनों अग्र एवं दोनों पश्च पैरों का 'V' आकृतियों से अंकित किया गया है। इस अंकन में कूबड़ के चित्रण का अभाव है। इसके रेखाकंन में लयात्मकता का भी अभाव है।

बिन्दु (डॉट) शैली में निर्मित वृषभाकृति के निम्न भाग में दो सफेद रंग से निर्मित रेखाकृतियां है। प्रथम– छोटी सरल रेखा जिसका दक्षिण भाग नीचे

की ओर वृत्ताकार घूम गया है, लेकिन पूरे वृत्त का अंकन नहीं किया गया है। यह 21 से.मी. लबी रेखा है। इसके सम्मुख अंग्रेजी के उल्टे 'यू' के आकार की अर्द्धवृत्ताकार रेखा है, जो 8 से.मी. लम्बी है। इन दोनों रेखाकृतियों के मध्य 13 से.मी रिक्त स्थान है। इस पर पैंटिनेशन के कारण इनका रंग मटमैला (क्रिम) सफेद दिखाई देता है। इन रेखाओं की मोटाई 0.2 से.मी. है।

हिरण के आगे लाल रंग से पूर्ण आपूरित वृषभ का चित्रण है। इसकी लम्बाई 21 से.मी. एवं ऊंचाई 8.5 से.मी. है। इसके शरीर को 2 से.मी. मोटा बनाया गया है, जबकी कूबड़ को 4.1 से.मी ऊंचा पीछे की ओर झुका हुआ असामान्य रुप से विषाल आकार में अंकित किया गया है। इसके पष्च भाग की 6 से.मी. ऊंचाई है। पैरों का अंकन अन्य चित्रों में अंकित पैरों की अभिव्यक्ति से समानता रखता है। इसके सींग 'V' आकृति के समान हैं, जो ऊपरी सिरों पर बाहर की ओर एक–दूसरे के विपरीत मुड़े हुऐ चित्रित किये गये हैं। इनकी लम्बाई 3.3 से.मी. है। पैरों के अंकन से स्थिरता के भाव का बोध होता है। यह दक्षिणाभिमुखी वृषभ के पार्श्वदृश्य भाग का सुन्दर चित्रांकन है।

शैलाश्रय के दक्षिण अर्द्वांश के लगभग मध्य में आदमकद ऊंचाई पर एक सफेद मटमैले रंग की रेखाकृति का अंकन है। इस रेखाकृति के निम्न भाग में लाल रंग की रेखाओं के अवशेष हैं, जिन पर यह रेखाकृति अध्यारोपित की गई है। इस आकृति के अंकन में प्रयुक्त रंग 'पेस्ट' की तरह का है, जिसको आवर्धित लैंस से देखने पर बहुत बारिक छिद्र दिखाई देते हैं। रेखाएं पतली हैं, जिनकी मोटाई 0.3 से.मी. से 0.7 से.मी. तक हैं। यह रेखीय संरचना लम्बवत 63 से.मी. लम्बी अंकित है। इसके ऊपरी भाग में दोनों ओर दो–दो लम्बाई के समानान्तर 3–3 से.मी. चौड़े लटकन अंकित किये गये हैं, जो मध्य में दोनों ओर की रेखाओं से क्रमशः सम्बद्ध हैं। मध्य भाग की दोनों रेखाएं 4 से.मी. की दूरी रखते हुए 58 से.मी. तक नीचे जाकर अन्दर की ओर ऊपर बढती हुई मध्य में मिलती हैं। नीचे दोनों रेखाओं के अन्दर की ओर मुड़ने से दो नॉब 'U' आकृति के बन जाते हैं। ये दोनों नॉब 9 से.मी. मोटे हैं। इनके मध्य दोनों ओर रेखाएं 4 से.मी. ऊपर की ओर उठती हुई मिलती हैं। उत्तरी नॉब दक्षिणी नॉब से कुछ लम्बा एवं नुकीला है। इस रेखाकृति के ऊपरी भाग चौड़ाई 12 से.मी. है। यह प्रतिकात्मक संरचना है। शैलाश्रय के मध्य भाग में आदमकद ऊंचाई पर विशेष रंग से अंकित होने के कारण इसका विशिष्ट महत्व है।

इस विशिष्ट आकृति से 1.25 मी. दक्षिण में लाल रंग से पूर्ण आपूरित दक्षिणाभिमुखी एक वृषभ का चित्रण है। वृषभ का स्थिर भाव है एवं शैली में

अन्य चित्रांकनों से समानता है। वृषभ के पार्श्व भाग का चित्रण है। इसका आकार 18.2 से.मी. एवं 14.2 से.मी. है। इसके सींग 0.85 से.मी. मोटी रेखा द्वारा 6.4 से.मी. लम्बे 'टष आकृति के हैं, जो बाहर की ओर मुड़े हुए चित्रित किये गये हैं। इस वृषभाकृति की मांटाई 3.9 से.मी. है। इसका कूबड़ मुख्य शरीर से 3.0 से.मी. ऊंचा अंकित किया गया है।

वृषभाकृति से 20 से.मी. ऊपर तथा 12.5 से.मी. दक्षिण में एक लाल रंग की पूर्ण आपूरित रेखाकृति है। सम्भवतया यह पशु के पश्व भाग का अधूरा चित्रांकन है, जिसका मुख भाग उत्तर की ओर अंकित किया जाना शेष था। पशु के पश्व भाग की इस रेखा की मोटाई 1.2 से.मी. तथा ऊंचाई 6.0 से.मी. एवं लम्बाई 7.7 से.मी. है। बालों के गुच्छ के निकट पूंछ की रेखा पतली अंकित की गई है, जो 6 से.मी मोटी गहराई है। बालों के गुच्छ में 4 पतली रेखाएं अंकित की गई हैं। जिनकी लम्बाई 0.8 से.मी. तथा मोटाई 0.5 से.मी. है।

इस रेखाकृति के ठीक 2.9 से.मी. ऊपर लाल रंग से पूर्ण आपूरित मछली का चित्रांकन है। यह भू–सतह के समानान्तर क्रम में उत्तराभिमुखी चित्रित की गई है। चित्रण में पार्ष्व दृष्य भाग का अंकन है। मुंह की ओर नुकीले भाग को आंषिक तौर पर ऊपर की ओर उठाकर चित्रित किया गया है। यह मछली का अंकन 16 से.मी. लम्बा एवं 7.3 से.मी चौड़ा है। मुंह के पास खासकर भाग 1.5 से.मी. लम्बा तथा 1.5 से.मी. चौड़ा है। चित्रण में मछली के यथार्थ स्वरुप का अंकन किया गया है। ऊपरी भाग में एक 1.2 से.मी. लम्बा पंख एवं निम्न भाग में दो (प्रत्येक 1.2 से.मी. लम्बे) पंख चित्रित किये गये हैं। पष्व भाग के सकरे भाग की चौड़ाई 1.7 से.मी. तथा पश्व पंख (पूंछ) की चौड़ाई 2.5 से.मी. है। मछली के चित्र के 3.2 से.मी. ऊपर एवं 30 से.मी. पीछे दक्षिण की ओर एक अन्य लाल रंग से पूर्ण आपूरित रेखाकृति का अंकन है। यह 11 से.मी लम्बी एवं 1.4 से.मी. मोटी सरल रेखा है, जिसका दक्षिण भाग नीचे की ओर 1.7 से.मी. मोटी रेखा के रुप में समकोण पर 5.1 से.मी. तक बढ़ाकर की गई है। यह प्रतिकांकन है, जिसका अभिप्राय अस्पट है।

उपरोक्त रेखाकृति से 15 से.मी. नीचे दक्षिण भाग में लाल रंग से पूर्ण असपूरित वृषभ की ठोस आकृति का चित्रांकन है। यह उत्तराभिमुखी वृषभाकृति 20 से.मी. लम्बी एवं 9 से.मी. ऊंची है। इस वृषभाकृति का आकार विषिष्ट है। इसका मुंह एवं पैरों के अन्तिम सिरे नुकीले अंकित किये गये हैं। कूबड़ भी अधिक ऊंचा नहीं है। छरहरे बदन का पार्ष्वकन किया गया है। 4.3 से.मी. लम्बी गर्दन का यह वृषभ कूबड़ के पास 3.1 से.मी. एवं मध्य भाग में 1. 5 से.मी. मोटा है। दोनों पैरों के मध्य शरीर के नीचे के भाग की लम्बाई 5.8

से.मी. तथा दोनों पैरों के सिरों के मध्य का अन्तराल 8.4 से.मी. है। 7.4 से.मी. लम्बी पूंछ को पश्व भाग से क्रमषः सीधी रेखा द्वारा दूर होते हुए चित्रित किया गया है। लम्बी गर्दन एवं पूंछ का अपेक्षाकृत पीछे की ओर सीघा खींचा होना, वृषभ में गति भाव को अभिव्यक्त करता है। इस आकृति के चित्रांकन में सीधी सरल रेखाओं का प्रयोग स्पष्ट है और इसे ज्यामितिक अंकन कहा जा सकता है। कूबड़ शरीर की रेखा से 7 से.मी. ऊंचा है। सींग मुंह की रेखा को पीछे बढ़ाकर एक सरल रेखा से अंकित किया गया है। इसके दोनों सींगों को एक रेखा से प्रदर्षित किया गया है। सम्भवतः चितेरे ने दूसरे सींग को इस सींग की सीध में एवं इसकी आड़ में स्वीकार किया है। मुंह का अग्रभाग, पैरों के सिरे, पष्व भाग का उन्नत भाग एवं कूबड़ नुकिला अंकित किया गया है।

इस वृषभाकृति से 10 से.मी. दक्षिण में लाल रंग पूर्ण आपूरित एक अन्य वृषभाकृति का चित्रांकन है। इस उत्तराभिमुखी वृषभ के पार्ष्व दृष्ट भाग का अंकन किया गया है। चित्रांकन की शैली लगभग अन्य वृषभाकृतियों के सदृष्य है। यह 25 से.मी. लम्बा एवं 9.7 से.मी. ऊंचा है। आगे के पैरों से कूबड़ तक की ऊंचाई 9.9 से.मी. तथा शरीर का मध्य भाग 3 से.मी. मोटा है। शरीर अनुभाग से कूबड़ 2.7 से.मी. ऊंचा है। दोनों पैरों (अग्र एवं पश्च) के मध्य 11.1 से.मी. की दूरी है तथा इसकी पूंछ 9.3 से.मी. लम्बी अंकित की गई है, जिसके गुच्छ में 5 पतली रेखाओं का अंकन किया गया है। इस वृषभाकृति में मुंह, सींग एवं शरीर के मध्य भाग एवं पूंछ का रंग हल्का हो गया है।

उपरोक्त वृषभाकृति से 8 से.मी. नीचे शैलाश्रय के दक्षिण भाग में एक अन्य उत्तराभिमुखी लाल रगं से पूर्णतः आपूरित वृषभाकृति का ठोस अंकन है। यह 23 से.मी लम्बा एवं 15.6 से.मी. ऊंचा चित्रांकन है। यह वृषभाकृति अगले पैरों से कूबड़ तक 10 से.मी. ऊंचा है। इसका कूबड़ मुख्य शरीर से 3 से.मी. ऊंचा चित्रित किया गया है। शरीर अनुभाग की न्यूनतम मोटाई 3 से.मी. है। 0.8 से.मी. मोटी रेखा से 10 से.मी. लम्बी पूंछ का चित्रांकन किया गया है। इस पूंछ के गुच्छ में 0.8 से.मी. मोटी रेखाएं अंकित हैं। शैलाश्रय के अग्र भाग को पश्च भाग की अपेक्षा कुछ ऊंचा चित्रित किया गया है। पैरों का चित्रांकन अन्य वृषभाकृतियों के पैरों के अंकन के समान प्रदर्शित किया गया है, लेकिन सींगों के चित्रांकन में भिन्नता स्पष्ट है। इसके सींग ऊपर की ओर बढ़ते हुए अन्दर की ओर गोलाकार आकृति में मुड़े हुए चित्रित किये गये है तथा ये 6.3 से.मी. लम्बे हैं।

शैलाश्रय–2

यह विषाल शैलाश्रय पहाड़ी के लगभग मध्य ऊंचाई में स्थित है। असका विस्तार उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम की ओर है। इसकी लम्बाई 75 मीटर

तथा ऊंचाई 12.5 मीटर और यह 7.25 मीटर गहरा है। इस शैलाश्रय का छज्जा इतना आगे निकला हुआ है कि इसमें वर्षा, धूप इत्यादी से तत्कालीन मानव अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित अनुभव करता है। इस शैलाश्रय में पर्याप्त जमाव है, जिसका स्पष्टतः पुरातात्विक महत्व है। स्थानीय निवासी इस शैलाश्रय का 'चांद सूरज की ढ़ाढ़' कहते हैं। इस विशाल शैलाश्रय में चित्रण के मुख्य रुप से पांच समुह हैं। दो समूह उत्तरी छोर पर तथा तीन समूह मध्यवर्ती भाग में हैं। उत्तरी छोर पर लगभग आदमकद ऊंचाई पर शैलाश्रय की उर्ध्वाकार सतह पर एक लगभग गोलाकार संरचना का अंकन है। इस संरचना में गहरे लाल एवं हल्के लाल रंग दो प्रकार के रंगों का स्पष्ट प्रयोग दिखाई देता है। यह इन दो रंगों से निर्मित रेखीय गोलाकृति है, जिसके नीचे का मुंह खुला हुआ है तथा वृताकार रेखाएं बाहर की ओर मुड़ी हुई दिखाई गयी हैं। मुंह के पास मुड़ी हुई रेखाओं के मोड़ से ऊपरी रेखा की ऊंचाई 24 से.मी. है। इस संरचना का हल्के लाल रंग के दो वृत संकेन्द्रित अन्दर एवं बाहर तथा बीच में गहरे लाल रंग की मोटी रेखा के वृत द्वारा किया गया है। केन्द्रीय भाग में गहरे लाल रंग से पूर्ण आपूरित लगभग आयताकार ठोस संरचना का अंकन है। बाहरी हल्के लाल रंग द्वारा निर्मित रेखा 1.3 से.मी. मोटी है, जिससे 15.4 से.मी. त्रिज्या के वृत का चित्रण है, असके अन्दर 1 से. मी. मोटी गहरे लाल रंग की रेखा से 13.6 से.मी. त्रिज्या के वृत का अंकन है। इसके नीचे की ओर खुले मुंह की तरफ गहरे लाल रंग की रेखा विपरीत दिषा में बाहर की ओर असमान लम्बाई तक बढ़ी हुई है।

उपर्युक्त गोलाकृति के दक्षिण सिरे के निकट अपेक्षाकृत कम ऊंचाई पर (18 से.मी. नीचे) लाल रंग द्वारा पूर्णतः आपूरित ठोस वृषभाकृति का अंकन है। इसका रंग हल्का लाल दिखाई देता है। यह दक्षिणाभिमुखी कूबड़ युक्त वृषभ 24 से.मी. लम्बा एवं 16 से.मी. ऊंचा है। शरीर अनुभाग 4.2 से.मी. मोटा है तथा मुख्य शरीर की रेखा से कूबड़ 2.8 से.मी. ऊंचा है। सींग 'ट' आकृति के जिनके ऊपरी सिरे बाहर की ओर मुड़े हुए हैं, 8.5 से.मी. लम्बी रेखा से अंकित किये गये हैं। सींग की रेखा 0.6 से.मी. मोटी है। पूंछ भी सींगों के समान एक ठोस रेखा द्वारा अंकित की गई है, इसकी लम्बाई 8.3 से.मी. है। इस पुंछ पर गुच्छ का अंकन है, लेकिन रेखाएं स्पष्ट नहीं हैं। इस वृषभाकृति के चित्रण में पैरों का अंकन भिन्न प्रकार से पृथक–पृथक पैर का एक डण्डेनुमा सरल रेखा से अंकित किया गया है।

इस चित्र के दक्षिण की ओर 1.65 मी. की दूरी पर लगभग सम ऊंचाई पर एक अन्य चित्रण है। यह मानव एवं पषु आकृति का युग्मित चित्रण है। अस चित्रण में कर्षण एवं उत्खचन दोनों पद्धतियों के प्रयोग दिखाई देते हैं। सम्भव है प्रारम्भ में उत्खचन पद्धति का ही प्रयोग किया गया हो, लेकिन

मानवाकृति के हाथों एवं पैरों के अंकन के अतिरिक्त वर्तमान में उत्खचन के साक्ष्य अनुपलब्ध हैं। हाथ एवं पैरों के अंकन के अतिरिक्त चित्रण में पुर्णतः एकरुप आपूरण है। अतः इसके अंकन में प्रयुक्त तकनीक में स्पष्ट विभेद करना कठिन है। पषु आकृति के अंकन में भी उत्खचन के प्रमाण उपलब्ध हैं। यह चित्रांकन 52 से.मी. लम्बा एवं 16 से.मी. ऊंचा है।

इस चित्रांकन के उत्तर की ओर मानवाकृति तथा दक्षिण की ओर पषु आकृति का अंकन है। दोनों में चित्र निर्माता ने सम्बन्ध सम्पर्क अभिव्यक्त करने के उद्देष्य से ही पषु के मुख भाग एवं मानव शरीर के रेखा के मध्य अन्तराल को स्पष्ट नहीं किया है। मानवकृति में उसके सम्मुख भाग का अंकन है, जिससे उसके दोनों हाथ एवं दोनों पैर पृथक–पृथक रुप से रेखीय अंकन द्वारा निर्मित किये गये हैं। हाथ एवं पैरों की रेखा को ठोक–ठोक पर (पैकिंग) अंकित किये जाने के प्रमाण उपस्थित हैं। दोनों हाथों से पैरों तक की लम्बाई 20 से.मी. है, जो सिर के ऊपर की ओर गोलाई के अन्दर की ओर मुड़े हुए अंकित किये गये हैं। सिर से पैर तक 16 से.मी. लम्बाई है। पैरों का अंकन सीधे डण्डे के समान है, लेकिन नीचे दोनों टांगों की रेखा एक–दूसरे के विपरीत बाहर की ओर मुड़ी हुई है, जो टांगों के साथ–साथ पैरों की अभिव्यक्ति का अंकन है। मानवाकृति को भावनुसारी चित्रित किया गया है। इस आकृति में उसके दोनों हाथों का ऊपर की ओर उठाकर इस प्रकार चित्रांकन किया गया है, जिससे लगता है कि वह प्रसन्नता अभिव्यक्त कर रहा हो या उल्लसित मुद्रा में हो। यह भी सम्भव है कि इसे अभिव्यक्त करना ही चितेरे का मुख्य उद्देश्य रहा हो।

इस चित्रांकन में मानव एवं पशु का सान्निध्य स्पष्टतः परिलक्षित होता है। पषु आकृति का उत्तराभिमुखी चित्रांकन मानवाकृति से सटाकर अभिन्न रुप से किया गया है। चित्र निर्माता ने मानव एवं पशु के मध्य सान्निध्य प्रकट करने के लिए पशु आकृति की गर्दन को लम्बा करके मानव शरीर से एकाकार कर दिया है। इसलिए मानवाकृति में शरीर की रेखा एवं पशु आकृति के अग्रभाग की रेखा में भेद करना स्पष्ट रुप से सम्भव नहीं है। पशु का मुख भाग एवं सींग चित्रांकन में अभिव्यक्त नहीं किया गया है। मानव एवं पशु के एक साथ चित्रण में पशु के सींगों का चित्रांकन नहीं किया जाना भी पशु में मानव के प्रति मैत्रिभाव को दर्शाता है।

चित्रण में पषु आकृति (44 से.मी. लम्बाई एवं 17 से.मी. ऊंचाई तथा पश्च भाग 15 से.मी. पूंछ का अंकन) है। पूंछ में गुच्छ के सीान पर एक गोलाकार संरचना (गांठनुमा) उत्कीर्ण की गई है। स्पष्ट है कि इस अंकन में पतली

रेखाओं यथा हाथ, पैर, पूंछ का अंकन उत्खचन पद्धति से किया गया है। पशु आकृति में पशु के पार्श्व दृश्य भाग का अंकन किया गया है।

उपरोक्त चित्रांकन से 15 से.मी. दक्षिण में 70 से.मी. की ऊंचाई पर एक गहरे लाल रंग की संरचना का अंकन है। इस संरचना की आकृति विषिष्ट है। उत्तर की ओर नुकीली मध्य भाग में मोटी तथा दक्षिणी भाग में पुनः नुकीले स्थान (घुण्डी) है। यह गहरे लाल रंग में पूर्णतः आपूरित ठोस आकृति का चित्रांकन है। इस आकृति का चित्रांकन शैलाश्रय में अपेक्षाकृत अधिक ऊंचाई पर किया गया है। यह चित्राकंन गहरा पैटिनेटेड है। यह विषिष्ट शंकवाकार संरचना शंखाकृति के सदृष्य दिखाई देती है। यह 32 से.मी. लम्बी 12.5 से.मी. चौड़ी संरचना है, इसका दक्षिण नॉब 6 से.मी. व्यास का है। यह संरचना एकाकी अंकित की गई है।

शैलाश्रय के लगभग मध्यवर्ती भाग के उत्तरी अर्द्धांष में दो मानवाकृतियों का अंकन है। ये मानवाकृतियां शैलाश्रय के आदमकद ऊंचाई पर लगभग समानान्तर 9 से.मी. के अन्तराल पर स्वतंत्र रीति से निर्मित की गई है। उत्तरी मानवाकृति का अंकन लाल रंग से निर्मित चित्रण के ऊपर अध्यारोपित है। अंकन की पृष्ठीाूमि पूर्णतः लाल रंग से आपूरित दृष्टिगत होती है। इस रंगीन पृष्ठभूमि पर कर्षण पद्धति द्वारा पूर्णतः आपूरित मानवाकृति का अंकन है। यह कृर्षित मानवाकृति कहीं–कहीं पैटिनेटेड एवं क्षरित है। यह 17.5 से.मी. लम्बी एवं 11.5 से.मी. चौड़ी आकृति है। इस मानवाकृति के अंकन में नायकत्व भाव को प्रदर्षित किया गया है। यह आकृति सूकरमुखी (मुखौटायुक्त) चित्रित की गई है। इस आकृति में सम्मुख भाव का गत्यात्मक अंकन किया गया है। यह पुरुषाकृति का चित्रांकन है, जिसके 4.5 से.मी. लम्बे जननांगों के विषेष रुप का चित्रण है। इसका सीना 7.5 से.मी. चौड़ा पूर्णतः आपूरित कर्षिण विधि से निर्मित है। पेट 2.5 से.मी. मोटा है। मुंह को स्पष्ट रुप से अभिव्यक्त करने के उद्देष्य से उसके पार्ष्व भाग का अंकन है। टांगों का भी गतिषीलता को अभिव्यक्त करने के उद्देष्य से पार्श्वभाग का अंकन किया गया है, लेकिन इसके अंकन में लयात्मकता है। इस आकृति का उत्तराभिमुखी गतिशील अवस्था का अंकन है। बाजुओं का सम्मुख भाग प्रदर्शित किया गया है, लेकिन इसके अग्रभाग को गोलाकार संरचना के रुप में अंकित किया है। भुजाओं की रेखा 1.1 से.मी. मोटी है।

इस प्रकार यह पुरुष आकृति उत्तर की ओर मुख किये हुए तथा उत्तर की ओर ही पांव उठाये हुए दिखाई देती है, लेकिन भुजाएं एवं वृक्षस्थल का सम्मुख रुप प्रदर्षित किया गया है। यह चित्रकार के द्वारा विभिन्न गतिविधियों

को अभिव्यक्त करता हुआ प्रतिकात्मक चित्रांकन है। इस चित्रण में यथार्थ स्वरुप के अंकन का अभाव है।

इस मानवाकृति से 3 से.मी. नीचे तथा 9 से.मी. दक्षिण में एक अन्य पुरुष आकृति का रेखीय अंकन है। यह अंकन रेखीय शैली में उत्खचन पद्धति द्वारा किया गया है। इसके अंकन में पैकिंग के साक्ष्य स्पष्टतः दृष्टिगत होते हैं। यहां पैकिंग के गड्डों में काले रंग का पैटिनेशन दिखाई देता है। दोनों मानवाकृतियां लगभग समान स्वरुप की दृष्टिगत होती हैं, लेकिन शैली एवं पैटिनेशन के आधार पर दक्षिणी मानवाकृति अपेक्षाकृत पूर्वकाल की कृति अनुमानित की जाती है। इस आकृति की लम्बाई 20.5 से.मी. तथा चौड़ाई 1.5 से.मी. है। पुरुष जननांग 6.7 से.मी. लम्बा तथा इसके अग्रभाग को 3.3 से.मी. व्यास की गोलाकृति से अभिव्यक्त किया गया है। टांगों का एक सरल रेखा द्वारा सीधा अंकन है, जो 3.9 से.मी. लम्बी है। भुजाएं शरीर की रेखा के दोनों ओर 9.1 से.मी. लम्बी अंकित की गई हैं। भुजाओं के अन्तिम सिरे पर कलाई भाग को मोड़कर एक–दूसरे के विपरीत क्रम में ऊपर की ओर चित्रित किया गया है। यह मानवाकृति भी सूकरमुखी (मुखौटा) एवं उत्तरामुखी अंकित की गई है। भुजाओं एवं टांगों का अंकन से यह आकृति सम्मुख भाग का प्रदर्षन करती है, लेकिन मुख के अंकन से स्पष्टतः पार्ष्वदृष्य भाग का अंकन किया गया है। इस मानवाकृति का अंकन भी लाल रंग पर अध्यारोपित है।

शैलाश्रय में क्रमशः दक्षिण की ओर चित्रण के तृतीय समूह में लाल रंग की ज्यामितिक संरचना के ऊपर एक वृषभाकृति का कर्षित विधि से बाह्म रेखीय अंकन किया गया है। इस आकृति में वृषभ के पार्ष्व दृष्ट भाग का दक्षिणाभिमुखी अंकन है। यह एक एकाकी चित्रण है। शैली की दृष्टि से यह चित्रण शैलाश्रय क्रमांक–1 में चित्रित लाल रंग की वृषभाकृतियों के चित्रांकन के सदृष्य दिखाई देता है। यह संरचना 29 से.मी. लम्बी एवं 15.3 से.मी. ऊंची है। इसके सींग ऊपर की ओर सीधे चित्रित किये गये हैं। इस आकृति के पिछले भाग की ऊंचाई 13.6 से.मी. है। वृषभ के 4.5 से.मी. ऊंचे कूबड़ के यथार्थ स्वरुप का रेखीय अंकन किया गया है। इस वृषभाकृति में शरीर अनुभाग की 7 से.मी. मोटाई है। इस आकृति के रेखीय संयोजन में 5 से.मी. से 1.1 से.मी. मोटी रेखाओं का प्रयोग किया गया है। पूंछ का अंकन सरल रेखा द्वारा किया गया है। इसमें गुच्छ का अंकन नहीं है। पांवों का अंकन ‘V’ आकृति की रेखा द्वारा किया गया है। कूबड़ एवं शरीर तथा पूंछ की रेखाओं में पर्याप्त लयात्मकता दृष्टिगोचर होती है।

शैलाश्रय के दक्षिण अर्द्धांष में कर्षित वृषभाकृति से 4.5 मी. दक्षिण में आदमकद से अधिक ऊंचाई पर एक उत्तराभिमुखी लाल रंग से पूर्ण आपूरित

पक्षी का चितांकन है। यह आकृति 63 से.मी. लम्बी एवं 31 से.मी ऊंची है। इसका उत्तराभिमुखी पार्श्व भाग का चित्रांकन किया गया है, लेकिन दोनों टांगे 18 से.मी. लम्बी 1.7 से.मी. मोटी सरल रेखा द्वारा 1.5 से.मी. अन्तराल पर समानान्तर रुप से डण्डे के समान चित्रित की गई हैं। इसकी गर्दन छोटी है तथा चोंच (मुख) खुली हुई है। खुली हुई चोंच का ऊपरी भाग 7.5 से.मी. एवं निचला भाग 3.1 से.मी. लम्बा है। इस चित्रण पर पैटिनेशन है।

इस पक्षी के चित्रण से 25 से.मी. दक्षिण में लगभग समान ऊंचाई पर पुष्पदल के सदृष्य एक अल्पना का गहरे लाल रेग की रेखाओं द्वारा अंकन किया गया है। यह अंकन लाल रंग की पृष्टभूमि पर निर्मित किया गया है। सम्भव है इस सतह पर किसी प्रकार का पूर्वकालीन लाल रंग से किया गया चित्रांकन रहा हो। चार पुष्प दलों की संयुक्त रेखाएं क्रमबद्ध रुप से चित्रित की गई हैं, पुष्पदलों के ऊपरी सिरों को नुकीला बनाया गया है तथा इस नुकीले भाग से एक छोटी रेखा भी ऊपर की ओर निकलती हुई अंकित की गई है। इस अल्पना में एक पुष्पदल 2.2 से.मी. चौड़ा तथा 9 से.मी. ऊंचा है।

पुष्पाकृति से 2 मीटर दक्षिण में लगभग समान ऊंचाई पर उत्खचन तकनीक द्वारा एक रेखीय आकृति का अंकन किया गया है। यह आकृति किसी कठोर उपकरण को शैलाश्रय की भित्ति पर ठोक–ठोक (पैकिंग) कर निर्मित रेखाओं से संयोजित की गई है। इसकी रेखाओं में पर्याप्त पैटिनेषन होने के प्रमाण उपलब्ध हैं तथा रेखाएं अधिक क्षरित हो चुकी हैं। इस आकृति का अभिप्राय अस्पष्ट है, लेकिन आकार बिना बाजुओं के मानव शरीर के ऊपरी भाग का दिखाई देता है। यह आकृति 30 से.मी. × 30 से.मी. के आकार की है। रेखाओं से निर्मित इस संरचना में रेखाओं की मोटाई एक समान नहीं है। इस आकृति से 1.5 से.मी. दक्षिण में शैलाश्रय में समान ऊंचाई पर एक अन्य आकृति का कर्षण तकनीक से अंकन किया गया है। यह आकृति लाल रंग के अस्पष्ट चित्रण पर अध्यारोपित है। यह 3.3 से.मी. मोटी एवं 15 से.मी. लम्बी उदग्र रेखा के दक्षिण भाग में क्रमषः दो छोटे एवं बड़े गोलाकार संरचनाओं के संयोग से निर्मित है। ये पार्श्व में स्थित संरचनाएं क्रमषः 3 से.मी. एवं 16 से.मी. लम्बी है। बड़ी संरचना का अंकन 5 से.मी. मोटा किया गया है।

इस शैलाश्रय के दक्षिण छोर पर अपेक्षाकृत अधिक ऊंचाई पर चित्रण का पांचवा समूह अंकित है। यह समूह उपरोक्त रेखाकृति से 5 मी. दक्षिण में 2 मी. की ऊंचाई पर स्थित है। शैलाश्रय का यह भाग अपेक्षकृत कठोर एवं समतल है। इस सपाट उदग्र भित्ति पर चित्रों के दो ऊर्ध्वाकार समूह हैं। उत्तरी समूह में 5 चित्रों का अंकन किया गया है। इन चित्रों में से 4 एक

उदग्र रेखा में तथा एक पार्श्व में अंकित है। चित्रों का अंकन गहरे एवं हल्के लाल रंग से किया गया है। गहरे लाल रंग की 0.7 से.मी. मोटी रेखा से ऊध्वाकार पंक्ति में पार प्रतिकात्मक संरचनाओं का 60 से.मी. भित्ति सतह पर अंकन किया गया है। आकृति उध्वाकार एवं पूर्णतः आपूरित है। इस चित्रण पर पैटिनेशन है।

द्वितीय ऊध्वाकार पंक्ति में चित्रांकन 50 से.मी. दक्षिण में समानान्तर क्रम में अंकित किया गया है। इस चित्रण में गहरे लाल रंग से 3 चित्रों का अंकन किया गया है। ऊपरी भाग में एक पुष्पनुमा आकृति (15 से.मी. × 17 से.मी.) का अंकन है। इस आकृति के केन्द्रीय भाग से 8 छोटी–छोटी लम्बवत् रेखाओं का अंकन किया गया है तथा मध्य भाग में उत्तर की ओर मानवाकृति 16 से.मी. लम्बी है। इसके अंकन में सम्मुख दृष्ट भाग को प्रदर्षित किया गया है। इस आकृति के पार्ष्व की एक भुजा पैटिनेषन के नीचे दबी हुई है। इस मानवाकृति का अंकन गहरे लाल रंग से लयात्मक रेखा द्वारा रेखीय शैली में किया गया है। इसके कुछ आगे निम्न सतह पर मानवाकृति की ओर मुखपेक्षी गहरे लाल रंग से अंकित एक पक्षी का अंकन उल्लेखनीय है। लम्बी टांगों का, ऊंची गर्दन वाला यह पक्षी विशिष्ट रुप से चित्रित किया गया है। यह एक गोलाकार संरचना पर खड़ा हुआ चित्रित किया गया है।

सम्भवतः इस चित्रण से मानव एवं पक्षी का आपस में सम्बन्ध प्रदर्षित किया गया है। यह 13 से.मी. लम्बी गर्दन का अंकन है। सिर 2 से.मी. मोटा है, चोंच का चित्रण नहीं है। चोंच के स्थान पर सिर के अंकन में प्रयुक्त रेखा में अंतराल दिखाई देता है। सम्भवतः चोंच का आकार लघु रहा हो तथा सिर को दुहरी रेखाओं की वृत्ताकार संरचना से अभिव्यक्त किया गया है। इस पक्षी के पैरों के नीचे गोलाकृति अपेक्षाकृत मोटी रेखा (1.75 से.मी.) द्वारा अंकित की गई है, जिसका मध्यवर्ती भाग पूर्णतः रंग विहीन है। सम्पूर्ण आकृति 5.5 से.मी. लम्बी एवं 4.5 से.मी. चौड़ी है। पक्षी की आकृति में विशिष्टताएं शुतुर्मुर्ग के समान दिखाई देती है।

शैलाश्रय–3

यह शैलाश्रय पहाड़ी के शिखर भाग में स्थित है। यह उत्तर–पूर्वाभिमुखी शैलाश्रय है। दक्षिण–पूर्व से उत्तर–पश्चिम की ओर इसका विस्तार 11.40 मी. है। यह 5.40 मी. गहरा सुरक्षित शैलाश्रय है। इसकी छत फर्श से लगभग 6 मी. ऊंची है। शैलाश्रय की ऊपरी चट्टान अपेक्षाकृत अधिक आगे तक होने से सुरक्षित छज्जे का रुप ग्रहण किये हुऐ है। इसकी फर्श में प्रस्तर खण्डों का एक व्यवस्थित जमाव दिखाई देता है। इन जमें हुऐ प्रस्तर खण्डों में एक पट्टिकरनुमा प्रस्तर पर दो पंक्तियों में 6–6 अश्मनिकष बने हैं। इस शैलाश्रय

के उत्तरी अर्द्धांष के मध्यवर्ती भाग में आदमकद ऊंचाई पर लाल रंग की रेखाओं का अंकन है। 90 से.मी. चौड़े आधार पर 6 समानान्तर क्रम में 1.5 से. मी. मोटी रेखाकृति का अंकन है। यह रेखाकंन नीचे से अर्द्धवृत्ताकार आकृति में ऊपर की ओर उठा हुआ दिखाई देता है तथा इसका ऊपरी भाग लुप्तप्रायः है। इस रेखाकृति से 1.20 मी. पूर्व की ओर समान ऊंचाई पर दो पतली रेखाओं के द्वारा एक अन्य रेखीय संरचना का अंकन है। 14 से.मी. लम्बी दुहरी रेखाएं लगभग बराबर अन्तराल रखती हुई तिर्यक क्रम में ऊपर की ओर बढ़ी हुई हैं। इस तरंगाकार आकृति में चार श्रृंग एवं 4 गर्त दिखाई देते हैं। इन दोनों रेखाओं के मध्य 5 से.मी. की दूरी है तथा यह रेखा 0.4 से.मी. मोटी है।

भीतरो (डोकन)

नीमकाथाना–कोटपूतली मार्ग पर 15 कि.मी. उत्तर–पूर्व में डोकन ग्राम स्थित है। यह स्थल डोकन गांव से 4 कि.मी. उत्तर–पष्चिम में पहाड़ियों से घिरा हुआ है। पहाड़ियों के भीतरी भाग में स्थित इस स्थल को 'भीतरो' कहा जाता है। इस क्षेत्र का पानी डोकन ग्राम के पास निर्मित बांध में एकत्रित होता है तथा इसके पूर्व में कांसावती नदी प्रवाहित होती है। भीतरों के आस–पास पहाड़ियों की तलहटी में अनेकों जगह ताम्र निष्कर्षण के पश्चात् शेष अवशिष्ट के ढ़ेर (धातु मल) अवस्थित हैं। इसके साथ में लाल रंग के मृदपात्रवशेष भी उपलब्ध हैं। यहां चार शैलाश्रय हैं, जिनमें से एक शैलाश्रय चित्रित है। यह शैलाश्रय भीतरो ग्राम से 1 कि.मी. उत्तर में दो पहाड़ियों के मध्य स्थित नाले के दायें किनारे पर लगभग मध्यम ऊंचाई पर अवस्थित है। यद्यपि यहां की पहाड़ियों में शैलाश्रय संरचनाओं का अभाव है, लेकिन यह एक सटिक चट्टान का एकाकी शैलाश्रय चित्रांकन युक्त है। इसका एक भाग पूर्वाभिमुखी तो दूसरा भाग उत्तराभिमुखी है।

शैलाश्रय के पूर्वाभिमुखी भाग में चित्रांकन है, लेकिन उत्तराभिमुखी भाग की सतह क्षरित हो चुकी है। यह शैलाश्रय 13.5 मी. लम्बा (इसका पूर्वाभिमुखी भाग 7.5 मी. और अत्तराभिमुखी भाग 6 मी. लम्बा) है। ऊपर के आच्छादन सहित इसकी ऊंचाई 10 मी. है, जबकी फर्श से छत की ऊंचाई 4 मी. है। शैलाश्रय के छत्तेनुमा प्रक्षेप से गहराई 3 मी. है, जबकी सामान्यतः यह 1.5 मी. गहरा है। इसकी फर्श शैलाश्रय की चट्टान से अभिन्न है, अतः निक्षेप नहीं है। यहां लाल रंग से वृषभ का अंकन किया गया है। यहां से तीन वृषभाकृतियां रंग से पूर्ण आपूरित मिलती हैं। (वर्ष 2012–13 में जयपुर सर्किल, भारतीय पुरातत्व विभाग के डॉ. विनय गुप्ता के नेतृत्व में उत्खनन हुआ)

ऐतिहासिक काल की जानकारी हमें विभिन्न पुरास्थलों से मृदपात्र संस्कृतियों के माध्यम से मिलती हैं। इस दृष्टि से बणंजारा खेड़ा (हरिपुरा) एवं बैवां–पाटन महत्वपूर्ण पुरास्थल हैं। जहां से हमें विभिन्न मृदपात्र संस्कृतियों के साक्ष्य मिलते हैं।

बैवां (पाटन)[3]

यह स्थल सीकर जिले के नीमकाथाना उपखण्ड मुख्यालय से उत्तर–पूर्व की ओर लगभग 25 कि.मी. तथा पाटन से 4 कि.मी. पूर्व की ओर धांधेला ग्राम से पूर्व की ओर 1 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। बैवां कांसावती के बायें किनारे पर स्थित है। यह स्थल पूर्व से पष्चिम की ओर विस्तृत है, जो लगभग 400 × 300 मी. क्षेत्र में फैला है। यहां कुल सांस्कृतिक जमाव 10 मी. है, जो विविध संस्कृतियों के अवशेषों को अपने में समेटे हुऐ है। टीले के ऊपरी सतह पर धातु मल और मृदपात्रों के टुकड़े छितरे हुऐ हैं। ताम्र एवं लौह धातु को गलाने का कार्य लम्बी अवधि तक रहा होगा, जिसको धतुमल का ढ़ेर इंगित करता है। टीले के दायें भाग पर आधुनिक बस्ती आबाद है, जो धीरे–धीरे टीले पर फैलती जा रही है। टीले को चारों ओर से स्थानीय निवासी कृषि के लिए समतल किये जा रहे हैं। इसके चारों ओर पत्थर एवं ईंट से बनी संरचनायें दिखाई देती है।

सबसे निचले स्तर (प्रथम स्तर) पर गणेष्वर संस्कृति के समान लाल स्लिप युक्त मृदपात्र परम्परा मिलती है। मध्यम एवं ऊपरी स्तरों से धूसर रंग की पात्र परम्परा तथा लाल रंग की मृदपात्र परम्परा मिलती है। ये मृदपात्र उच्च्य तापमान पर पकाये हुए हैं। कुछ पर लाल रंग का लेप किया गया है। इसके ऊपर काले रंग से चित्रण किया गया है तथा कुछ पर आन्तरिक भाग में कुरेद कर चित्रण किया गया है। कुछ पर ठप्पा मारकर एवं चिपकवा विधि द्वारा भी चित्रण किया गया है। चित्रण मुख्यतः काले रंग से पात्र के गर्दन वाले भाग से लेकर मध्य भाग तक किया गया है। इसमें रंगमहल परम्परा के पात्र भी मिलते है। कुछ लाल रंग के मृदपात्र जो मध्यम प्रकार के हैं, जोधपुरा संस्कृति से साम्यता लिए हुए मिलते हैं।

रियासत काल से ही पाटन–नीमकाथाना–कोटपूतली क्षेत्र को तोरावाटी या तंवरावाटी के नाम से जाना जाता है। तोरावाटी क्षेत्र तोमरवंशी राजपूतों का राज्य रहा है। आरम्भ में यहां परमार, चौहान एवं सांखला शासकों का शासन रहा है।[4] तंवर वंश के अनंगपाल तोमर–प्रथम ने 9वीं शताब्दी में दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया था। बाद में अनंगपाल द्वितीय ने सन् 1050 में दिल्ली के शासन की बागडोर अपने हाथों में लेकर शेखावाटी तक अपने राज्य का विस्तार किया।[5] दिल्ली में तुर्क शासकों के आगमन पश्चात्

अनंगपाल द्वितीय के पौत्र ने सांखला राजपूतों को युद्ध में हराकर तोरावाटी में प्रवेश किया तथा पाटन को अपनी राजधानी बनाया था।

अजमेर–दिल्ली के चौहान वंश के अन्तिम स्वतंत्र शासक महाराज पृथ्वीराज तृतीय, जो अनंगपाल द्वितीय के भान्जे थे (सन् 1179–1193) के समय तोरावाटी प्रदेश पर तंवर उनके अधीन सामंतों के रूप में षासन करते थे।[6] सन् 1601 में मुंगेर–बिहार के युद्ध में बादशाह अकबर की ओर से पाटन के राव बलभद्रसिंह ने अपने तंवर साथियों के साथ युद्ध में भाग लिया था। मुंगेर दुर्ग को फतह कर पाना अति दुष्कर कार्य था, राव बलभद्रसिंह ने दुर्ग के द्वार को तोड़कर दुर्ग को अपने अधीन तो कर लिया था और उसी समय उनकी मृत्यु हो गयी थी। उनके साथ उनकी एक रानी भी सती हुई थी, जिनकी छतरी मुंगेर में स्थित है। राव बलभद्रसिंह की स्मृति में भी एक छतरी का निर्माण किया गया।[7]

सन् 1789 में मराठों व राठौड़ राजपूतों के मध्य पाटन के पास युद्ध हुआ था। तंवरों की सेना पीठ दिखाकर भाग खड़ी हुई। पाटन के राव सम्पतसिंह ने मराठा महादजी सिंधिया के आगे आत्मसमर्पण कर दिया और मराठों की अधीनता स्वीकार की। पाटन सन् 1792 से सन् 1803 तक यह मराठा शासकों के अधीन रहा। इस समय राजा जवाहरसिंह पाटन के शासक थे।[8]

राव जवाहरसिंह की दो राणियों से उनके पुत्र लक्ष्मणसिंह एवं बिशनसिंह हुए। सौतेले भाई बिशनसिंह के प्रति अपने पिता के अति प्रेम को देखकर लक्ष्मणसिंह ने बादलगढ़ के महल में अपने पिता की हत्या कर दी तथा सौतेले भाई एवं मां को बंदीगृह में डाल दिया।

पाटन में जल प्रबन्ध

कांसावती नदी पाटन के पहाड़ी नालों के रुप में बहती है। पाटन के राव राजाओं द्वारा बनवाया गया 'डोकन बांध' नष्ट–भ्रष्ट अवस्था में है। पाटन में अनेक प्रसिद्ध बावड़ियां हैं, जो आज जर्जर हालात में हैं।9

पाटन दुर्ग में सन् 1699 में महाराव बक्सी राम के राज्य के दीवान प्रेमसिंह चौहान ने केशर की बावड़ी एवं कुएं का निर्माण दिल्ली के बादशाह औरंगजेब के समय में करवाया था। पाटन की बावड़ी और कुओं में अधिकांश राव केशरीसिंह के नाम की स्मृति को संजोये हुए हैं। मध्य महल के नीचे राव केशरीसिंह द्वारा निर्माण करवाया हुआ एक विशाल पानी का टांका है। इस टांके में अभी भी पानी भरा हुआ रहता है। इसमें प्राकृतिक जल धाराओं से पानी आता है। बादल महल में प्राचीन समय में एक बावड़ी तथा 3 कुएं बने

हुए थे, अब ये बावड़ी तरणताल का रुप ले चुकी है।[10] पाटन के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं पुरास्थलों को संरक्षण की आवश्यकता है।

पाटन दुर्ग– तंवर वंष की 186 वीं पीढ़ी के राव बलभद्रसिंह ने सन् 1564 में आगरा के लाल किले की नकल पर पाटन में दुर्ग का निर्माण करवाया था।11 राव केसरीसिंह ने सन् 1639 में पाटन के महलों को 'बादलगढ़ महल' नाम से निर्माण करवाया था। राव केसरीसिंह का समय पाटन के इतिहास में स्वर्ण युग कहा जा सकता है। इनके समय में पाटन के महलों का विस्तार हुआ तथा मूर्तिकला एवं चित्रकला का भी विस्तार हुआ। लगभग 1500 मीटर ऊँचे पहाड़ पर बनवाये गये इस ऐतिहासिक दुर्ग का क्षेत्रफल लगभग 300 बीघा है। इस किले पर छः विशाल बुर्जों का निर्माण किया गया है, जिसमें तीन अग्र भाग तथा तीन पष्च भाग में बनवायी गई हैं। अग्र भाग की बाँयी बुर्ज के पास ही दुर्ग का प्रवेश द्वार है, जिसमें एक के बाद एक तीन अन्य द्वार बनाये गये हैं। मध्य महल में प्रवेश से पहले एक के बाद दो बड़े दरवाजे बने हुए हैं।

महल के चारों कोनों पर चार छोटे बुर्ज बनाये गये हैं, जिनमें अग्र भाग के दोनों बुर्जों की ऊँचाई पष्च् भाग के बुर्जों की ऊँचाई से कम है। आगे के बुर्ज एक मंजिला तथा पीछे के दोनों बुर्ज दो मंजिला हैं, इनमें बहुत सारे खिड़कीनुमा झरोखें बने हुए हैं। महल के नीचे एक गुप्त महल भी बना हुआ है, जिसमें जाने के लिए सीढ़ीयां बनी हुई है। शौचालय तथा स्नानागार का भी किले में निर्माण करवाया गया है।

पाटन के पहाड़ से नीचे तलहटी में प्राचीन महल या मध्य महल है। यह किले तथा नीचे समतल पर निर्मित बादलमहल के मध्य निर्मित होने के कारण मध्य महल कहलाता है। यह भूमि से तीन मंजिल नीचे व चार मंजिल ऊपर अर्थात् कुल 7 मंजिल बना हुआ है। यह महल पाटन की पुरानी आबादी में स्थित था। इस महल का प्रांगण बहुत बड़ा है, इस प्रांगण में राजा का विषाल दरबारनुमा कक्ष बना हुआ है। इसके ऊपरी भाग पर भव्य छतरीनुमा कक्ष का निर्माण किया गया है। पाटन के मध्य महल के नीचे जल संरक्षण हेतु 12,500 वर्ग फुट पानी का टांका बना हुआ है। सन् 1699 में महाराव बक्सीराम के शासन काल के दीवान प्रेमसिंह चौहान ने 'केषर की बावड़ी' एवं कुऐ का निमार्ण दिल्ली बादशाह औरगजेब के समय करवाया था।12

जवाहरसिंह के शासनकाल में स्थापत्य कला का अधिक विकास हुआ। अनेक छतरियों का निर्माण हुआ जिनमें भित्ति चित्र बनाये गये हैं। इस महल में चारों तरफ सुन्दर बगीचा तथा नवीन पेड़–पौधे लगाये गये हैं। इसकी

बाहरी दीवारों पर सुन्दर माण्डणें उकेरे गये है। महल के अन्दर भी पशु–पक्षियों तथा युद्ध स्थल के आकर्षक चित्र अंकित है।

बादलगढ़ महल की बनावट, जयपुर के हवामहल से मेल खाती है। महल के अन्दर चांदी के पुराने बर्तन, तलवारें इत्यादि सहेज कर रखे गये हैं। वर्तमान में राव दिग्विजयसिंह ने बादलगढ़ महल को हैरिटेज होटल का रूप दे दिया है।

संदर्भ

1. मीना, प्रो. मदन लाल एवं गोधल डॉ. विनीत–सीकर का इतिहास, पृ. 32–39
2. मीना, डॉ. मदन लाल, शेखावाटी क्षेत्र का प्रागैतिहासिक एवं आद्यैतिहासिक पुरातत्व, पृ. 139–147
3. वही, पृ. 111
4. शर्मा, महावीर प्रसाद–तोरावाटी का इतिहास, पृ. 67
5. वही, पृ. 80
6. वही, पृ. 67
7. भण्डारी, चन्द्रराज–विश्व इतिहास कोश, खण्ड–प्रथम, ज्ञानमंदिर प्रकाशन, मध्यप्रदेश 1962, पृ. 61
8. शर्मा, दशरथ– चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय और उनका युग, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2003, पृ. 26
9. अकबरनामा (अनु.) मूलपाठ, जिल्द 3, पृ. 195
10. शर्मा, महावीर प्रसाद– तोरावाटी का इतिहास, पृ. 67
11. शर्मा, महावीर प्रसाद, तोरावाटी का इतिहास, पृ. 80
12. गहलोत, जगदीशसिंह–राजपूताने का इतिहास, भाग–3, हिन्दी साहित्य मन्दिर, जोधपुर, 1966, पृ. 123

प्राचार्य– राजकीय महाविद्यालय पाटन,
सीकर (राज.)

सहा. आचार्य–लोक प्रशासन, राजकीय कन्या महाविद्यालय,
लाडनूँ (राज.)

हाकडा दरियाव का ऐतिहासिक उल्लेख

ओम प्रकाश शर्मा

मुझे एक पुस्तक पढ़ने को मिली जिसका नाम है, Six thousand years of History of irrigation in SINDH जिसके लेखक हैं, एम.एच पन्हवार। इस पुस्तक में सिन्ध की सिंचाई प्रणालियों एवं नदियों के बारे में विस्तारपूर्वक लिखा गया है, पुस्तक में सरस्वती एवं हकड़ा नदी का कई बार उल्लेख आया है। मैं आपसे उन प्रसंगों को साझा करते हुए हकड़ा की स्मृतियों को पुनर्जीवित करने का प्रयास करूँगा। पुस्तक में हाकड़ा के संबंध में अधिकतर उल्लेख सत्रहवीं शताब्दी का है, जो ऐतिहासिक तौर पर प्रामाणिक बताये गये हैं तथा जनश्रुतियों एवं लोक गाथाओं में दो हजार ईसा पूर्व से लेकर ग्यारहवीं एवं तेरहवीं शताब्दी का उल्लेख शामिल है। समय लम्बा होने के उपरान्त इतिहासकार मुखर होकर हकड़ा का जिक्र कर रहा है, यह जानकर भी कि इसका मुख्य आधार जनश्रुति और लोकगाथाएँ हैं, जो अतिशयोक्ति से भरी होने के बावजूद सम्मोहित करने वाली थी। नानी, दादी से लेकर कहानीकारों ने इसे अपने मन के अनुरूप गढ़ा फिर भी मूल जिन्दा रहा अर्थात हकड़ा जिन्दा रहा, कहानीकार उम्र पाकर इस दुनिया से चला गया, दूसरा कहानीकार दुनिया में आया, नये आये कहानीकार ने इन जनश्रुतियों को नये रंग से रचा। भाषा, पहाड़, दरिया, मरूस्थल सभी ने अपने रंगो से हकड़ा को रंग प्रदान किये। लोकगीतों के वैज्ञानिक प्रमाण नहीं रहे, लोकगीत आज भी जिन्दा है।

मन में कई प्रश्न घूम रहे हैं, लाखी जंगल से मित्रवत व्यवहार रखने वाला हकड़ा स्वतंत्र नदी थी या किसी दूसरी नदी की सहायक नदी थी, किस काल में कब क्या हुआ, प्रश्न अनुत्तरित है। क्या इसे सतलज, घग्घर, यमुना, सरस्वती, सिन्धु, दृषद्वती नदियों में से किसी एक नदी की सहायक नदी माना जा सकता है, अथवा अलग–अलग काल में अलग–अलग नदियों की संगत में रही या फिर यह अकेली ही अलगोजा (एक वाद्य यंत्र) लिए हुए इस धरती को अपने राग से हर्षित किया करती थी। हकरा (हाकड़ा) का उल्लेख मुझे कई पुस्तकों में प्राप्त हुआ है उनका मैं प्रसंग देना चाहुँगा जिससे हकड़ा के बारे में जाना जा सकेगा।

एम.एच पन्हवार ने Six thousand years of History of irrigation in SINDH के पेज संख्या 291 पर लिखा है कि हाकरा नदी का जिक्र Sir Alexander Burne की पुस्तक में आया है। Sir Alexander Burnes एक राजनयिक थे। उन्होंने सन् 1833 में सिंधु नदी की पूर्वी शाखा का वर्णन करते हुए, कच्छ के लखपत के पास हकरा के जल प्रवाह पर सन् 1819 में भूकम्प के प्रभाव का उल्लेख किया है।

The earliest mention of Hakra is by Alexander Burnes, a diplomat, who in 1833, while describing the eastern branch of the River Indus (formerly taking off from the main stream, on its upstream's side above Rohri, was irrigating large tracks of land in the eastern desert), mentions of diverting of its waters by Ghulam Shah Kalhora in 1761 AD to dry up the rice fields near Lakhpat in Kutch, and also different courses produced by an earthquake of 1819 AD, on the waters of the Hakra or eastern branch of the River Indus.

एम.एच पन्हवार पुस्तक Six thousand years of History of irrigation in SINDH के पेज संख्या 291 पर लिखते हैं कि रिचर्ड फ्रासिंस बर्टन जो एक सर्वेक्षक एवं भाषाविद थे जो बाद में इतिहास से जुड़ गये, उन्होने हकड़ा को सिंधु नदी के प्राचीन प्रवाह के रूप में वर्णित किया। रिचर्ड फ्रासिंस बर्टन ने मामुई फकीरों की कविताओं का उपयोग भी किया जिनमें हकड़ा एवं सिंधु नदी का उल्लेख है।

सर्वे ऑफ इंडिया के C.F. Oldham का उल्लेख करते हुए एम.एच पन्हवार पुस्तक Six thousand years of History of irrigation in SINDH के पेज संख्या 293 लिखा है कि जो सतलुज, सरस्वती या घाघरा के पानी में अपने पानी का भी प्रवाह कर रहा था उसे सिंध में पूर्वी नारा के रूप में जाना जाता है, यह प्रवाह तेरहवीं शताब्दी के शुरूआती पच्चीस बरसों तक जारी रहा।

In 1874, C.F. Oldham of the Survey of India, wrote that Sutlej was discharging its waters in the bed of Sarsvati or Ghaghar, which in Sindh is known as the Eastern Nara and continued doing so until about the quarter of thirteenth century, and the Eastern Nara was not bed of the River Indus

एम.एच पन्हवार पुस्तक के पेज संख्या 293 पर लिखते हैं कि इसी प्रकार हग्स ने सिंध के गजेटियर में हकरा (पूर्वी नारा) को सिंधु नदी का ही एक प्रवाह क्षेत्र माना हैं। हकरा (पूर्वी नारा) का बहावलपुर और रूपार के मध्य सिंधु से इसका जुड़ाव मानते हैं। फिफ के सिद्वान्त को हग्स ने खारिज किया है। हग्स का विचार है कि सब्जलकोट और घोटकी के पास सिंधु नदी के प्रवाह क्षेत्र का फैलाव किसी अन्य स्रोत की ओर संकेत करता है। Huges,

an ICS officer, in his ‘Gazetteer of Sindh’(1876), considers the Eastern Nara or Hakra an old bed of the River Indus and having its source from the Indus, between Bahawalpur and Rupar. He discards Fife’s theory completely and thinks that spill water of the Indus near Sabzalkot and Ghotki may have been just another source of supply of water to it, rather than the sole source.

एम.एच पन्हवार पुस्तक के पेज संख्या 294 पर लिखते हैं कि पीथवाला ने लिखा है कि हकरा के पानी का एक हिस्सा सतलज नदी के पानी से निकलता है। जब यह प्रवाह आगे दक्षिण दिषा में बहता है तो यह गाद और रेत के जमाव के कारण आकार में कम हो गई और अंत में हकरा सूख गया। हकरा एक विशिष्ट, मध्यम और बारहमासी नदी प्रणाली है, जो बहावलपुर और सिंध के कोने के आसपास बहती है।

Pithawalla, writing in 1959, states that a portion of Hakra waters seems to have been derived from spill waters of the Sutlej, when it flowed further south. Ambala streams reduced in size owing to accumulation of silt and sand and finally Hakra dried up. The Hakra seems to be a distinct, moderate and perennial river system, flowing around the corner of Bahawalpur and Sindh, and almost parallel to this border. It was a degrading stream, having cut a channel of its own, now known as Nara and quite unlike mature type of aggrading the Mehran or Indus of Sindh

पीथवाला द्वारा दिया गया उल्लेख जिसमें हकरा के पानी का एक हिस्सा सतलज के पानी से निकलना बताया है, जो इस बात की ओर संकेत करता है कि हकरा में सतलज के पानी के अतिरिक्त अन्य प्रवाहों का पानी भी आता था और जहाँ तक सतलज के पानी का हकरा में आना इस क्षेत्र में हकरा के प्रवाह की ओर संकेत करता है। पीथवाला के इस विचार से मैं सहमत होने पर विचार कर सकता हूँ जिसका एक आधार पल्लू में दिखाई दे रही परत है जो गाद से भरी है तथा इसी प्रकार की परत सिरसा के थेहड़ में भी दिखाई दे रही है।

एम.एच. पन्हवार ने अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि कभी सिंधु नदी जैसी नदी बहती थी, नारा या हाकरा एक छोटी नदी थी जो कई शताब्दियों पूर्व सूख गई थी, कभी इसे सिंधु और सतलज से पानी मिला था। पन्हवार ने हाकड़ा को एक स्थान पर वाहिंद नाम दिया है। यही वाहिंद नाम का दरियाव ग्राम फोगां जो वर्तमान में चूरू जिले की सरदार शहर तहसील का एक बहुत ही प्राचीन गांव है, जिसका उल्लेख मंगल भाट द्वारा हस्तलिखित पुस्तक में आया है, इस ग्राम को आज से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व कोयलापुर पत्तन (कोयलापुर पांटण) के नाम से जाना जाता था, पुस्तक

में शासक अनंतराय सांखला पर लिखित पुस्तक में फोगां के निकट बहने वाले एक दरियाव का आया है।

Six thousand years of History of irrigation in SINDH पुस्तक में एम.एच पन्हवार ने निष्कर्ष स्वरूप लिखा है कि हकरा नदी सतलज की तुलना में एक बहुत छोटी नदी थी, पन्हवार ने हकरा को अपरिपक्व एवं युवा नदी कहा है साथ ही हकरा को स्वतंत्र नदी भी कहा है, जिस पर कालीबंगा जैसी सभ्यता विधमान थी। कई स्थानों पर पन्हवार ने सरस्वती और हकरा को एक ही नदी माना है, जिस प्रकार हकरा को सरस्वती से पृथक नहीं किया जा सकता उसी प्रकार हकरा को सिंधु से भी नहीं। जहाँ कहीं भी सरस्वती का हकरा के साथ उल्लेख किया है वहाँ यह जानकारी प्रदान की गई है कि सरस्वती या हकरा एक बारहमासी नदी थी, इनमें जलापूर्ति लगभग दो हजार ईसा पूर्व कम होने लगी थी, परिणाम यह रहा कि इसके तटों पर बस्तियों की संख्या में कमी भी आने लगी थी, हकरा (सरस्वती) में पानी की आवक कम होने के कारण यह बारहमासी नहीं रही। बहावलपुर के नीचे अभी भी गर्मियों के मौसम में इसे प्रवाह क्षेत्रों में अल्प मात्रा में पानी बचा रहता है। यही स्थिति नदीं के प्रवाह की विपरीत दिशा में जाने पर मरूस्थल से दो आब (दोआब के क्षेत्र के एक भूभाग के रूप में सिरसा के भूभाग को शामिल किया जा सकता है) के क्षेत्र आने तक रही। वैदिक काल और उसके बाद के समय में बस्तियाँ बची तो रही परन्तु धीरे धीरे आकार में कम होने लगी। हकरा के मुख्य प्रवाह क्षेत्र से निकलने वाले नाले भी जंगलों को सींचने में धीरे धीरे असमर्थ होने से बस्तियों के मध्य दूरी बढ़ने लगी। थेहड़ों के पाये जाने की स्थिति भी इसी प्रकार ही रही। एम.एच पन्हवार द्वारा दिया गया निष्कर्ष यहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों में हूबहू देखने का मिलता है। उत्तर से दक्षिण दिशा में जाने पर यही स्थिति देखने को मिलती है अर्थात थेहड़ के रूप में पुरानी बस्तियों के निषानात एवं जल प्रवाहों के प्रमाण उत्तर दिशा से दक्षिण दिषा की ओर अर्थात वर्तमान परिवेश की बात की जावे तो सिरसा के मुख्य थेहड़ को आधार मानते हुए दक्षिण—पश्चिम एवं दक्षिण दिशा से आगे बढने पर प्रवाह एवं बस्तियों का आकार सिकुड़ने अर्थात कम होने लगता है।

एम.एच. पन्हवार का आगे निष्कर्ष है कि 1650 ईसा पूर्व जब हकरा ने सिंध में प्रवेश किया अर्थात हकरा के जल प्रवाह में इतनी शक्ति थी कि वह मरूस्थल को पार करके सिंध तक आसानी से जा सकता था। सिंध में कई शताब्दियों तक हकरा ने अपना जल आपूर्त किया। यह स्थिति ईसा से 500 बरस पूर्व के बाद तक रही इसके बाद गर्मियों के दिनों में हकरा की सांसे फूलने लगी। आगे पन्हवार लिखते हैं कि हकरा थारपारकर जिले (वर्तमान में पाकिस्थान का मरूस्थलीय भूभाग) के वर्तमान रेगिस्तानी प्रदेश से कभी नहीं

निकला जैसा कि कई लोकगीतकारों ने सोचा, लिखा और गाया है। परन्तु सिरसा के आसपास के क्षेत्र में लोक गीतकारों से इस प्रकार का कोई गीत सुनने को नहीं मिला जिससे यह जानकारी प्राप्त हो सके परन्तु हकरा की स्मृतियाँ जन मानस में कहानियों के रूप में आज भी जीवित है, जैसा कि मैंने पहले भी में लिखा है सिरसा, रानियाँ, ओटू, सूरतगढ, टिब्बी, नोहर, भादरा, सरदारशहर, तारानगर के ग्रामों में रहने वालों के मन में आज भी हकरा स्थान पाये हुए है।

M.H.Panhwar writes in the paze of 301 - The other folklore writer Ursani believed that a part of western Thar bordering the old bed of the Dhoro Puran was called Mehranno because it was adjoining Mehran or the Indus or the Hakra or Wahind, and this river irrigated the Mehranno of Thar (Mehran never passed along this route). He also believes that at one time the Hakra, a branch of the Indus starting in the Punjab, passed east of Umarkot through Thar to the Rann of Kutch near the Nagar Parkar taluka

पन्हवार हकरा नदी के प्रवाह के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं जिसके तथ्य लोकगीत लेखक उर्सानी एवं रायचन्द पर आधारित है, उनका कहना है कि एक समय पंजाब से आरम्भ होने वाली सिंधु नदी की एक शाखा हकरा उमरकोट से पूर्व में थार से होकर नगरपारकर तालुका के पास कच्छ के रण तक जाती थी।

एम.एच. पन्हवार पुस्तक के पेज संख्या 301 में उल्लेख करते हैं कि सिंध और बलूचिस्तान में नाविकों की एक जनजाति रहती थी, जिसे हकरा जनजाति कहते थे, इस हकरा जाति का निवास हकरा नदी के तटों के निकट था और हकरा नदी उनके जीवन और आजीविका के केन्द्र में थी, हम इस ओर अपना विचार रख सकते हैं कि हकरा नदी के कारण ही हकरा जनजाति का नाम हकरा हुआ हो।

एम.एच. पन्हवार पुस्तक के पेज संख्या 301 में हकरा नदी का उल्लेख करते हुए तथ्य दिया हैं कि रामायण काल में हकरा नदी के तटों पर हाथियों का निवास स्थान था और यहाँ से अजुधिया (संभावना है कि यह अयोध्या हो) को हाथियों की आपूर्ति की जाती थी।

अब हम लाखी जंगल में निवास कर रहे सिरसा शहर को केन्द्र बिन्दु मानते हुए हाकरा से परिचित होने का प्रयास करेगें। जानकारी लेने पर यह तथ्य उभर कर आया कि सिरसा के आसपास चावल का व्यापार होता था। चावल की उपज यहाँ बहुतायत से होती थी अर्थात चावल इस क्षेत्र की मुख्य फसल थी। चावल की फसल की जहाँ तक जानकारी है कि यह फसल उन क्षेत्रों में बोई जाती है जहाँ जलीय प्रवाह भूभाग में एक जलीय परत के रूप

में फैल जाता हो, ऐसा बरसात के दिनों में किसी नदी के प्रवाह के पानी का समतलीय क्षेत्र में दूर तक फैल जाने से होता है।

M.H.Panhwar writes in the paze of 301 The town of Sirsa was an important rice market, situated on the Ghaghar, a tributary of Hakra सिरसा एवं महत्वपूर्ण चावल का बाजार था, जो हाकरा की एक सहायक नदी घग्घर पर स्थित था।

वर्तमान परिपेक्ष्य में बात करें तो सिरसा शहरवासी इस प्रवाह को घग्घर (नाली) के नाम से अधिक जानते हैं। घग्घर नदी (सरस्वती) का हाकरा के साथ कैसा रिश्ता था, मानवीय मन की तरह, पानी रूपी द्रव्य की भांति नदियों के भी रिश्ते तय हुए हैं, एक समय यह भी संभव है कि कोई नदी दूसरी नदी की सहायक नदी थी, जो वर्तमान में मुख्य नदी के साथ किसी प्रवाह का मिलना है। वर्तमान में मुख्य नदी भी एक बरसाती प्रवाह जैसी हो गई है तो सहायक नदी की व्याख्या बहुत मुष्किल है। भौगोलिक परिवर्तनों के कारण बहाव क्षेत्र एवं जलीय प्रवाह की मात्रा में कमीबेशी के कारण जो नदी आज किसी दूसरी नदी की सहायक थी ऐसा भी हुआ है कि भौगोलिक परिवर्तनों के कारण कभी वही नदी मुख्य नदी भी थी, ऐसा बहुत सी नदियों के साथ हुआ है। सतलुज और हाकरा के आपसी संबंधों को दूसरे कोण से देखा जा सकता है, हाकरा कब सतलुज की सहायक नदी रही अथवा सतलुज की एक धारा का नाम ही हाकरा हो अथवा हाकरा का नाम दृषद्वती के साथ भी जोड़ा जा सकता है, एक मत यह भी है कि कहीं दृषद्वती ही तो हाकरा नहीं, तो फिर किन दो नदियों का संगम बहावलपुर के पास था। सिरसा के आसपास के क्षेत्र में चावल की खेती के संबंध में मुझे मेरे पिता स्वर्गीय बलदेवराज जोशी द्वारा एक प्रसंग में उल्लेख किया गया था कि इस क्षेत्र में बाढ़ आने पर क्षेत्रवासी बहुत खुश होते थे, बाढ़ के साथ आई लाल रंग की मिट्टी में धान की फसल बोते थे। प्रवाह के साथ बहकर आई लाल मिट्टी में पोषकीय तत्वों की बहुलता के कारण बहुत मिट्टी उपजाऊ होती है। जहाँ तक लाल रंग की मिट्टी का प्रश्न है पलूर कोट के थेहड़ में एक समय के अन्तराल में लाल रंग की मिट्टी एक परत साफ दिखाई दे रही है, तो क्या पलूर कोट एवं सिरसा में जलीय प्रवाह अपने

साथ लाल रंग की मिट्टी लेकर आ रहा है, दोनों स्थानों का प्रवाह कहीं एक ही स्थान से तो नहीं आ रहा था। सिरसा का थेहड़ दो नदियों के संगम पर स्थित था। समय के विभाजन अर्थात समय के एक लंबे अन्तराल की बात की जावे तो मौटे तोर पर जैसा कि सिरसा के निवासी बताते हैं कि सिरसा के थेहड़ के दोनों ओर नदियाँ बहती थी। पलूर कोट क्षेत्र में भी दो नदियों के आने की गवाही वहाँ स्थित थेहड़ की मिट्टी दे रही है। फिर एक बार उस

अवधारणा को बल मिलता है कि भटिन्डा, रंगमहल, भटनेर, सिरसा, पलूरकोट आदि स्थानों पर एक पूर्णकालिक नदी के साथ–साथ दूसरी नदी के आने के प्रमाणों की अक्सर बातें हुई हैं। इस बात की संभावना पर भी विचार किया जा सकता है कि कुछ ऐसे भी स्थल हैं जहाँ से एक ही नदी दो प्रवाहों में विभक्त हुई हैं, उन स्थानों पर भी मानवीय बस्तियाँ पाये जाने के संकेत मिले हैं जिनमें से एक उदाहरण नोहर के पास करोतानगर है।

सिरसा के आसपास रहने वाले आज भी घग्घर को नाली के नाम से जानते हैं। सिरसा निवासी श्री पतराम वर्मा ने अपनी पुस्तक ''सिरसा का इतिहास'' में लिखा हैं कि घग्घर की इस घाटी में घना तथा भयंकर जंगल होता था। इसे हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सिरसा के आसपास प्रवाहित होने वाली घग्घर नदी घाटी में लाखी जंगल घना हुआ करता था। अर्थात सिरसा के बाहर निकलते ही घग्घर नदी के पानी से सिंचित लाखी जंगल अपने घने रूप में था।

मेरे पिता स्वर्गीय बलदेवराज जी ने मुझे बताया कि थेहड़ वाली जगह पर बहुत अतिक्रमण हो गया है। लोग इस स्थान पर बस गये है, बताते थे कि सन् 1982 के लगभग की बात है, मैं अक्सर थेहड़ पर चला जाता था एवं थेहड़ के पास सांडशाला नामक एक स्कूल में अध्यापन का कार्य करता था, जिसके कारण एक रोज मैं थेहड़ पर घूमने गया तो मकान निर्माण किये जाने के कारण थेहड़ एक किनारे को मजदूरों द्वारा तोड़ा जा रहा था तो मुझे मिट्टी के बरतनों के टूटे हुए टुकड़े एवं मिट्टी का एक छोटा बरतन प्राप्त हुआ। मेरे पिता द्वारा कही गई बातें मुझे स्मरण हो आई तो वर्ष 2015 में मैंने उनसे इस बात का जिक्र किया तो उन्हौने मुझे मिट्टी के टूकड़े एवं बरतन दिखाये। थेहड़ से प्राप्त मिट्टी के बरतन एक डिब्बे में रखे हुए थे, जिनको साफ कर मैंने तस्वीरें ली। चूँकि थेहड़ पर पाये गये मिट्टी के इन बरतनों की उम्र के बारे में मेरी कोई जानकारी नहीं थी। साथ ही उन्होंने मुझे बताया कि मिट्टी का यह बरतन कुषाण वंष के समय का है। जिससे यह प्रमाणित होता है कि सिरसा कुषाण वंष के अधीन रहा है।

लाखी जंगल से प्रवाहित होने वाले हकरा के बारे में विस्तार से जानने के लिए कहीं दूर चलते हैं। मारोठ हकरा नदी पर स्थित एक किला था। यह किला उमर सूमरो का था। उमर सूमरो के समय हकरा सूख गया था। उमर सूमरो के समय हकरा के सूखने की पुष्टि आवड़ चरित्र में मां भगवती के रूप में आवड़ माता द्वारा हकरा को अपने चळू से पी लेने की कथा से अनुमान लगाया जा सकता है। यह वह समय था जब हकरा में पानी का प्रवाह कम हो गया था। उमर सोमरो के समय उमरकोट को अमरकोट कहा जाता था।

जैसलमेर की ओर जाते समय हाकरा दो शाखाओं में विभाजित हो गई। एक शाखा को लुडानो कहा गया। बताया जाता है कि मूमल की काक (जादू की जगह) लुडानो पर स्थित थी, लुडानो सोमरो के समय सूख गई और काक खंडहर में बदल गई।

Six thousand years of History of irrigation in SINDH पुस्तक में पन्हवार ने पृष्ठ संख्या 302 पर लिखा है कि लोकगीतकारों द्वारा गाये गये मूमल, हमीर, रानो, अमरानो, किन्झी, कँरू के लोकगीत वाद्य यन्त्रों की ताल के साथ स्वर मिलाते हुए पूरे इलाके में गाये जाते थे, गाये जाने वाले गीत बताते हैं कि हकरा बारहवीं से तेरहवीं शताब्दी में भी बह रहा था। यहाँ हकरा के सूखने के समय में अन्तर नजर आ रहा है।

एक लोक गायक ममूर लोक कविताओं की व्याख्या करते समय इतिहास और ऐतिहासिक भूगोल के साथ सह संबंध बनाते थे, ममूर के अनुसार हकरा की पूर्वी शाखा वाहिंद जो पंजाब, जैसलमेर गुजरती हुई थारपारकर जिले के सिंध में प्रवेश करती थी। वाहिंद (वृहद पंजाब) में बहने वाली दो नदियाँ सरस्वती और दृषद्वती आज से 4 से 3 हजार बरस पहले ही सूख गई थी लेकिन वाहिंद बहता रहा और वाहिंद (हकरा) कब सूख गया पता ही नहीं चला।

सतलुज से निकलने वाले पानी ने बाढ़ की स्थिति में हकरा को पानी की आपूर्ति की थी, इसका अर्थ यह है कि यह वह समय है जब हकरा में सतलज का पानी का प्रवाह आता था, प्रश्न यह भी खड़ा हो रहा है कि क्या हकरा दृषद्वती का क्षेत्रीय अथवा गैर साहित्यिक नाम तो नहीं था। सरस्वती–हकरा स्वतंत्र नदी प्रणाली थी, भूगर्भीय हलचलों के कारण दो हजार ईसा पूर्व इनमें पानी कम होने लगा साथ ही इनके तटों पर बसने वाले नगर उजड़ने लगे। सिंकन्दर के 325 ईसा पूर्व हिन्दुस्थान पर आक्रमण के समय सरस्वती–हकरा नदी प्रणाली बारहमासी प्रवाह खो चुका थी, एक बार फिर प्रश्न सामने आ गया कि दृषद्वती का हकरा के साथ क्या संबंध था। तेरहवीं शताब्दी के आरम्भ में हकरा प्रवाह पूरी तरह सूख गया था। शोधकर्ता विल्हेल्मी का कहना है कि 325 ईसा पूर्व सरसुती–हकरा बाढ़ के मौसम (जून से सितम्बर) में प्रवाहित होता है और कभी कभार सिंधु में बाढ़ आने से सिंधु का पानी भी उसे प्राप्त होता था।

पन्हवार ने लिखा है कि सन् 1226 के आसपास सतलुज ओर सिंधु नदी में पानी की कमी के कारण हकरा में पानी की आवक कम होने के कारण सूख गया और आबादी अन्यत्र विस्थापित होने लगी। ''क्लाइमैटिक ऑप्टिमम'' (सन 900 से 1300) काल 1180 से 1200 ईस्वी तक जारी रहा जिसके कारण

कम बारिश की स्थितियाँ रही और हकरा का अंतिम रूप से सूखना जलवायु परिवर्तन मुख्य कारण है। हालांकि अठारहवीं शताब्दी के मध्य तक पानी की आपूर्ति के संकेत जनश्रुतियों में आज भी पाये जाते हैं। मैं इस समय में रंगमहल, पलूरकोट एवं करोतानगर के उजड़ने का समय मान सकता हूँ।

1. एम.एच पन्हवार, Six thousand years of History of irrigation in SINDH पेज संख्या 291, 293, 301, 302

1938 के सीकर–जयपुर संघर्ष में जाट किसानों की भूमिका

अरविन्द भास्कर

जयपुर के महाराजा सवाई मानसिंह द्वितीय सीकर के राजकुमार हरदयालसिंह को अपने साथ इंग्लैंड यात्राा पर ले जाना चाहते थे किन्तु रावराजा कल्याणसिंह अपने पुत्रा को उसके विवाह से पहले इंग्लैंड भेजना नहीं चाहते थे क्योंकि रावराजा ने ध्रंगध्र के महाराजा (जिनकी लड़की के साथ हरदयालसिंह की सगाई हो चुकी थी) को इस बात का लिखित वचन दिया था कि शादी से पहले हरदयालसिंह को विलायत नहीं भेजा जायेगा। इस मामले को लेकर बात इतनी बिगड़ गई कि बार–बार कहने के बावजूद रावराजा जयपुर दरबार में उपस्थित नहीं हुए और अपनी स्थिति मजबूत करने के लिए सीकर के गढ़ में हजारों कायमखानियों व राजपूतों का इकट्ठा कर शहर के दरवाजे बंद कर लिये। इस पर जयपुर से सशस्त्रा पुलिस और पफौज के दस्ते भेजकर सीकर पर तोपें तैनात कर दी गईं। रावराजा को समझाने के लिए जयपुर के रेजीडेंट और प्रधनमंत्राी सीकर पहुंचे किन्तु रावराजा ने उनसे मिलने से इंकार कर दिया। अंत में राजपूताना के ए.जी.जी. श्री ए. सी. लोथियन 29 अप्रैल को स्वयं सीकर आये और रावराजा से मिलकर उन्हें समझा–बुझाकर अपने साथ अजमेर ले गये। 1 मई को रावराजा ने जयपुर नरेश से मुलाकात कर पिछली बातों पर अपफसोस जाहिर किया किन्तु रावराजा को सीकर से निर्वासित कर दिया गया। इसके विरोध में और रावराजा के समर्थन में सीकर में पब्लिक कमेटी नामक एक संगठन बना जिसने लम्बे समय तक जयपुर प्रशासन के खिलापफ आन्दोलन चलाया। अंत में जमनालाल बजाज व ठाकुर मदनसिंह नवलगढ़ के हस्तक्षेप करने के बाद पब्लिक कमेटी की सीनियर आपिफसर कैप्टन वेब व उनके सहायक के. एल. बापना को हटाए जाने जैसी मांगें स्वीकार करने का आश्वासन दिए जाने पर 25 जुलाई 1938 को सीकर की स्थिति सामान्य हो पाई। करीब चार माह लम्बे चले इस सीकर–जयपुर संघर्ष में जाट किसानों की स्थिति कापफी अहम बन गई थी और दोनों पक्षों ने उनका समर्थन हासिल करने का हरसंभव प्रयास किया।

इस घटनाक्रम के दौरान ही 3 जून 1938 को जयपुर राज की तरपफ से एक गजट नोटिपिफकेशन द्वारा 'सीकर में वर्तमान स्थिति उत्पन्न करने वाले

कारणों की जांच करने तथा इसके लिए उचित उपचारात्मक उपाय सुझाने के लिए' लेफ्टिनेंट कर्नल जी. वी. बी. गिलन की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया जिसके दो अन्य सदस्य अचरोल का ठाकुर हरिसिंह (होम मेम्बर, जयपुर राज्य) और राय बहादुर दीवान करमचंद (सुपरिंटेंडेंट, खेतड़ी) थे।

11 जून की दोपहर को सीकर ठिकाने के विभिन्न गांवों के 16 जाटों का एक प्रतिनिध्मिंडल गिलन कमीशन के सामने उपस्थित हुआ जिसमें कन्हैयालाल वर्मा स्वरूपसर, गणेश राम कूदन, लेखराम कसवाली (जाट किसान पंचायत के अध्यक्ष), पन्नेसिंह कोलिड़ा, कालूराम कूदन, बक्साराम कूदन, दूदाराम, पन्नेसिंह बाटड़ानाऊ, भगवाना राम देवीपुरा, नत्थूराम गोठड़ा तगेलान, हरिसिंह पलथाना, हरदेव सिंह गोठड़ा, गोविन्द राम शिवसिंहपुरा, पृथ्वीसिंह गोठड़ा, ईश्वरसिंह भैरूंपुरा, और गोरूसिंह कटराथल शामिल थे। इस प्रतिनिध्मिंडल ने एक ज्ञापन प्रस्तुत किया जिसमें कैप्टन वेब के नेतृत्व वाले सीकर के मौजूदा प्रशासन को बनाए रखने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया जिसने ठिकाने की तरपफ से होने वाले कई अत्याचारों को रोक कर कृषक समुदाय को लाभ पहुंचाया था। उनके प्रवक्ता कन्हैयालाल ने वर्तमान आन्दोलन को पुरानी व्यवस्था के पुनर्स्थापन का प्रयास बताते हुए कहा कि सीकर ठिकाने की आधी जनता जाट है और उसका इस आन्दोलन से कोई सम्बन्ध नहीं है। आन्दोलन के प्रारम्भ में रावराजा साहब द्वारा उन्हें बुलाकर इसमें शामिल होने के लिए कहा गया था लेकिन उन्होंने यह कहते हुए मना कर दिया कि हम मौजूदा प्रशासनिक व्यवस्था में कोई बदलाव नहीं चाहते।

6 जुलाई 1938 को माधराम पलथाना, ईश्वरसिंह भैरूंपुरा, हरिसिंह पलथाना और भगवाना राम ने गिलन कमीशन के सम्मुख अपनी गवाहियां दीं। पलथाना के माधराम पुत्रा बुदाराम जाट पेंशनर सूबेदार उम्र 60 वर्ष ने बताया कि ''मौजूदा संकट का मुख्य कारण यह है कि कैप्टन वेब के आने से पहले हमसे लगान बहुत कठोरता के साथ वसूल किया जाता था। लगान के अलावा अनेक लागें और बेगार लगाई जाती थी जिनसे लाभान्वित होने वाले लोगों में बनिया, कायमखानी, ब्राह्मण, जागीरदार और बाढ़दार शामिल थे। उन दिनों यहां कोई न्याय नहीं था और शासन द्वारा इन उच्च वर्ग के लोगों का अनुचित समर्थन किया जाता था। इनमें से अध्किांश ज्यादतियों को कैप्टन वेब द्वारा समाप्त कर दिया गया जो राजपूतों और जाटों के प्रति एक समान व्यवहार करता है। इसलिए ये लोग पहले जैसी स्थिति में लौटने के लिए उत्सुक हैं।

पिछली कठिनाइयों का एक उदाहरण पेश करते हुए माधराम ने बताया कि कैप्टन वेब के आने से पहले जो लगान की दर थी, यद्यपि वही बाद में रखी गई किन्तु पहले अच्छी पफसल के वर्षों में अतिरिक्त लगान (12 आना के स्थान पर 1 रुपये से 1 रुपया 2 आना तक) वसूल किया जाता था और खराब वर्षों में लगान को केवल निलम्बित रखा जाता था जिसे बाद में ब्याज सहित वसूल किया जाता था। हमने सामूहिक रूप से इस व्यवस्था के खिलापफ रावराजा से शिकायत की किन्तु उन्होंने कहा कि वे हमें जयपुर का रास्ता दिखाएंगे। 1934 में वेब के आने के बाद से अच्छी पफसल के वर्षों में हमसे कोई अतिरिक्त लगान नहीं लिया जाता है और खराब वर्षों में लगान को निलम्बित नहीं किया जाता बल्कि छूट दी जाती है।

पिछले वर्ष रावराजा की शक्तियां छीन लिए जाने के बाद जब ठिकानेदार रावराजा की पुत्राी के विवाह के अवसर पर एकत्रित हुए तो उन्होंने आन्दोलन खड़ा करने की योजना बनाई किन्तु परिस्थितियां अनुपयुक्त मानते हुए उस समय यह योजना छोड़ दी गई। इस साल मार्च–अप्रैल में जब वे जयपुर में दूबारा मिले तो इस पर एक बार पिफर विचार किया। ठिकानेदारों ने रावराजा से कहा कि 'यदि आज आप ने अपनी शक्तियां खो दी तो कल हम भी अपनी शक्ति खो देंगे।' इसलिए उन्होंने रावराजा को आन्दोलन शुरू करने का सुझाव देते हुए उसमें अपनी सहायता देने का वचन दिया। यही कारण है कि बाहर के राजपूत अब रावराजा की सहायता के लिए सीकर आ रहे हैं।''

ईश्वरसिंह पुत्रा मोटा सिंह जाट ;भैरूंपुराद्ध उम्र 50 वर्ष ने बताया कि ''जब रावराजा गद्दी पर बैठे तो उन्होंने लगान की सभी तरह की दरों में वृद्धि कर दी अर्थात् लगान की दरें बढ़ाकर 6 आना से 8 आना, 8 आना से 10 आना एवं 10 आना से 12 आना कर दी और उसी समय जरीब की लम्बाई 60 हाथ से घटाकर 56 हाथ कर दी गई। इसके बाद जिन वर्षों में अच्छी पफसल हुई, उनमें लगान सामान्य दरों से अध्कि वसूल किया गया। यदि बढ़ी हुई दरों के अनुसार भुगतान नहीं किया जाता तो पुलिस भेजकर लगान वसूल किया जाता और लगान न चुकाने पर पुराने काश्तकारों को बेदखल कर उनकी जमीन नए काश्तकारों को दे दी जाती। रावराजा द्वारा अनेक तरह की लाग और बेगार वसूल की जाती थीं जिनकी संख्या लगभग 32 थीं। हमने जयपुर जाकर शिकायत की। कैप्टन वेब ने अपनी नियुक्ति के बाद हबूबों की वसूली रूकवा दी, अच्छे वर्षों में लगान बिना वृ(ि के वसूला जाने लगा और खराब वर्षों में छूट दी जाने लगी।

महाजन लोग ठिकाने के पदों पर नियुक्त होते थे और वे काश्तकारों को पैसा उधर देते थे। जब उनका निजी ट्टण नहीं चुकाया जाता तो वे कर्जदारों को काठ में डाल देते थे। कैप्टन वेब ने आने के बाद इन लोगों को ठिकाने के पदों से हटा दिया और उनके स्थान पर शिक्षित लोगों को नियुक्त किया। इससे महाजनों को ठेस पहुंची।

सीकर की चारदीवारी के गेट बंद करने से 5–6 दिन पहले रावराजा ने जाटों सहित सभी समुदायों के लोगों को बुलाया और उनसे व्यक्तिगत मुलाकात की। रावराजा ने हमें बताया कि 'तुम लोग जो परेशानियां भोग रहे हो, उनका कारण मैं नहीं बल्कि राजपूत जमींदार हैं। मैं कल दोनों पक्षों को बुलवा कर समझौता करवा दूंगा किन्तु इस समय तुम लोगों को आन्दोलन में शामिल होना चाहिए।'

अगली सुबह मेंॅ खान ;पफर्राशद्ध और किशोर सिंह हमें जनाना ड्योढ़ी ले गए। महारानी साहिबा ने हमें कहा कि हम उनकी नजर में उनके पुत्रा हरदयालसिंह की तरह हैं और हमें रावराजा के पास देवीपुरा जाना चाहिए। हम देवीपुरा चले गए, जहां हमें शेखीसर के लालसिंह, पालड़ी के देवीसिंह, सरवड़ी के किशोरसिंह, रोरू के हीरासिंह, सीकर के मेंॅ खान, गाड़ोदा के लालसिंह, बठोठ के रिछपालसिंह और दूजोद के बालजी मिले। रावराजा के कहने पर उन्होंने हम से अपनी समस्यायें पूछी और कहा कि अपनी शिकायतें लिखित में दे दो। हमने कहा कि जब तक हम अपना निर्धरित लगान देते रहें, तब तक हमारी जमीन से हमें बेदखल नहीं किया जाए। इस पर उन्होंने कहा कि इसे भविष्य में पफैसला करने के लिए छोड़ देते हैं और इस समय तुम उन निर्देशों की पालना करो, जो राज द्वारा तुम्हें दिए जाएं। हमने पूछा कि राज हमसे क्या करवाना चाहता है? पालड़ी के देवीसिंह ने जाजम पर एक गोला बनाया और कहा कि हम एक बाड़ा (गढ़/मोर्चा) बना रहे हैं और बाड़े में कोई व्यक्ति वपफादार न हो तो उसे निकाल बाहर कर देना चाहिए तथा शेष सभी लोग बाड़े में ही मजबूती से बैठे रहे क्योंकि जयपुर हम पर कब्जा करना चाहता है। हमने जवाब दिया कि 'जब आप हमारा एक साधरण सा निवेदन स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं तो हम आपके साथ शामिल क्यों हों?' यह जवाब सुनकर वे बहुत क्रोध्ति हुए और हम सब रावराजा के पास चले गए। हमने 'दरबार' ;रावराजाद्ध से कहा कि जैसा कि आपने राजपूतों के साथ एक समझौता करवाने के बारे में कहा था और राजपूत वह समझौता करने में असपफल रहे हैं, इसलिए हम आन्दोलन का साथ देने के लिए तैयार नहीं हैं। रावराजा ने कहा कि 'बठोठ के ठाकुर साहिब राजपूतों के साथ तुम्हारे विवादों के समाधन की गारंटी होंगे और क्योंकि सभी राजपूत और महाजनों ने हस्ताक्षर कर दिए हैं, अतः तुम लोग भी जनाना ड्योढी में

जाकर हस्ताक्षर कर दो।' मुझे नहीं पता कि उस कागज पर क्या लिखा हुआ था जिस पर हमें हस्ताक्षर करने के लिए कहा जा रहा था। हमने जवाब दिया कि पूर्व में हमें अपने बच्चों को बेचकर भी लगान चुकाना पड़ा था और इस तरह के व्यवहार के बाद हम आन्दोलन से जुड़ने के लिए तैयार नहीं हैं। रावराजा साहब ने इस मामले पर विचार करने और दोपहर को ड्योढ़ी पर जाने के लिए कहा। हमने जवाब में कहा, 'जो हुकुम' किन्तु हम गए नहीं। दोपहर को हमें पिफर बुलाया गया किन्तु हम नहीं गए। बाद में हमें कहा गया कि हम में से कम से कम दो लोग वहां जाएं। तदनुसार मैं और कूदन के गणेश वहां गए। तब हमें वह कागज दिखाया गया और उस पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया जिसमें निम्नलिखित मांगें थीं :–

1. 'महाराज कुमार' को इंग्लैंड नहीं जाना चाहिए।
2. 'दरबार' को अपनी मूल शक्तियां प्राप्त होनी चहिए।
3. वेब और बापफना को हटाया जाना चाहिए।

हमने कहा कि ये राज की मांगें हैं, किसानों की नहीं; और हम हस्ताक्षर किए बिना चले आए।

सीकर जाट किसान पंचायत के सरपंच हरिसिंह पुत्रा श्योबक्स सिंह जाट (पलथाना) उम्र 50 वर्ष ने कमीशन को बताया कि ''रावराजा के गद्दी पर बैठने के समय हमारी जोत 60 हाथ के जरीब के अनुसार थी। तीन–चार वर्ष बाद गांव का बन्दोबस्त ;सं. 1984 अर्थात् सन् 1927 ई.द्ध किया गया जिसमें मेरी 122) बीघा जमीन को जरीब की लम्बाई 60 हाथ से घटाकर 56 हाथ करके 134) बीघा कर दिया गया। मेरा लगान 10 आना प्रति बीघा था जिसे बढ़ाकर 12 आना कर दिया गया। लगान बढ़ने व अकाल के कारण हम लगान का भुगतान नहीं कर सके। हम शिकायत करने जयपुर गए किन्तु 2–3 महिने तक वहां किसी ने हमारी शिकायतें नहीं सुनीं। हम 2–3 साल तक परेशानियां झेलते रहे और पिफर जयपुर में एक आम आन्दोलन उठ खड़ा हुआ, जहां हम पिफर से दो महिने तक रोते रहे। पिफर हमें घर जाने के लिए बोला गया और वेब साहब को सीनियर अपफसर नियुक्त कर यहां भेजा गया। उन्होंने रावराजा द्वारा 12 आना से अध्कि लिए जा रहे अतिरिक्त लगान को हटा दिया। उन्होंने हमें बुलाकर अपनी अन्य शिकायतें प्रस्तुत करने के लिए भी कहा और 32 हबूब व बेगार हटा दिए गए।

वेब साहब के आने से पहले हमारे साथ जानवरों जैसा व्यवहार किया जाता था। तब से लेकर अब तक वेब साहब ने हमसे खराब पफसल वाले वर्षों में निर्धरित लगान से कम लगान लिया है लेकिन ;अच्छी पफसल वाले

सालों मेंद्ध निर्धरित लगान से ज्यादा कभी भी नहीं लिया। उनके आने से पहले किसी भी जाट को ठिकाने की सेवा में नहीं लिया जाता था। महाजन, राजपूत और ब्राह्मण इस व्यवस्था के समर्थक थे और पैसों व कृपा से न्याय प्राप्त करते थे। इन वर्गों ने देखा कि हम ;जाट काश्तकारद्ध उनके नियंत्राण से दूर होते जा रहे हैं। अतः 2–3 महिने पहले राजपूतों ने सीकर से 10 मील की दूरी पर स्थित माताजी (जीणमाता) नामक स्थान पर एक मीटिंग की। दो दिन की मीटिंग के बाद वे सीकर लौट आए। उन्होंने सभी गांवों में घुड़सवारों को दौड़ाया और सभी लोगों को सीकर शहर में पहुंचने के लिए कहा।

सीकर पहुंचने पर उन सभी को महारानी से रोटी के परचे मिले। हमें सरकार का राशन लेने और सरकार का आदेश मानने को कहा गया। हम 11 जाटों ने इंकार कर दिया और मेंढ़ू खान पफर्राश द्वारा हमें देवीपुरा कोठी ले जाया गया। हमारी मांगें स्वीकार न किए जाने पर हमने जयपुर रियासत के खिलापफ चल रहे आन्दोलन में शामिल होने से इंकार कर दिया।

सीकर जाट किसान पंचायत के कोषाध्यक्ष भगवाना पुत्रा डूंगाराम जाट (देवीपुरा) उम्र 30 वर्ष ने बताया कि ''कैप्टन वेब के आने से पहले हम किसानों के साथ जागीरदारों, राजपूतों और खालसा गांवों में बाढ़दारों द्वारा बहुत बुरा बर्ताव किया जाता था। कैप्टन वेब ने हमारी स्थिति में कापफी सुधर किया। इस आन्दोलन के शुरू होने से कुछ दिन पहले हमें देवीपुरा कोठी जाने के लिए कहा गया। मैं उन 11 जाटों में से एक था जो वहां गए थे। हमें आन्दोलन में शामिल होने के लिए कहा गया किन्तु जमीन से बेदखली के खिलापफ हमारे दावों को टाल दिया गया। अतः हमने आन्दोलन में शामिल होने से इंकार कर दिया और घर लौट आए।''

जुलाई 1938 को पन्नेसिंह बाटड़ानाऊ, पृथ्वीसिंह गोठड़ा और कन्हैयालाल वर्मा ने गिलन कमीशन के सम्मुख जाटों का पक्ष प्रस्तुत किया। सीकर जाट किसान पंचायत के सदस्य पन्नेसिंह पुत्रा कानाराम जाट (बाटड़ानाऊ) उम्र 46 वर्ष ने बताया कि ''यहां सीकर ठिकाने में 85,000 जाट हैं और हमारा वर्तमान आन्दोलन से कोई लेना–देना नहीं है जो मुख्यतः जागीरदारों, मुआपफीदारों, उदकियों (ब्राह्मणों) और बाढ़दारों द्वारा चलाया जा रहा है। वेब साहब के आने से पहले इन्हें अनुचित लाभ दिया जाता था जो वेब साहब ने आने के बाद बंद कर दिया और उनके आने के बाद से ही हमारे साथ समानता का व्यवहार किया जा रहा है। यही कारण है कि ये लोग वेब साहब और बापफना को हटवाना चाहते हैं और कुप्रबंध के पुराने दिनों की ओर लौटना चाहते हैं जिनमें हमें बहुत कठिनाई झेलनी पड़ी थी।''

सीकर जाट किसान पंचायत के सदस्य पृथ्वीसिंह पुत्रा रामबक्स सिंह जाट (गोठड़ा) उम्र 35 वर्ष ने बताया कि ''रावराजा माधेसिंह जी के समय लगान 125 रुपये था जिसे वर्तमान रावराजा के समय बढ़ाकर 325 रुपये कर दिया गया। वेब साहब के आने से पहले हमें अनेक लाग देनी पड़ती थी जिन्हें बड़ी कठोरता के साथ हमसे वसूल किया जाता था। वेब साहब ने इन लागों को बंद करवा दिया, स्कूलें तथा अस्पताल खोले और नियुक्तियों व न्यायालयों में होने वाले भ्रष्टाचार को रोक दिया।

वर्तमान आन्दोलन के प्रमुख नेता कायस्थ, महाजन, बाढ़दार, भोमिया और वे लोग हैं जिन्हें इस आन्दोलन में शामिल होने के लिए मुफ्रत में खाना खिलाया जा रहा है। लेकिन इस आन्दोलन के लिए सर्वाध्कि उत्तरदायी रावराजा स्वयं हैं जो इसे जारी रखने के लिए अपना पैसा खर्च कर रहे हैं। यदि पुरानी व्यवस्था को पिफर से लागू कर दिया गया तो हम सब जाटों और शायद अन्य किसानों को तत्काल सीकर छोड़ना पड़ेगा।'' इस प्रकार सीकर ठिकाने को जयपुर रियासत के साथ चले संघर्ष में जाट किसानों का समर्थन हासिल नहीं हो सका।

प्रधानाचार्य
राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय,
लालासी (सीकर)

गाँधी के शिक्षा–चिंतन की बुनियाद

संदीप कुमार मील

सार

इस शोध में महात्मा गाँधी के शिक्षा के चिंतन के बुनियादी पक्ष का विश्लेषण किया गया है। यहाँ पर उनके शिक्षा चिंतन में जिस प्रकार के व्यक्ति, समाज और राज्य की परिकल्पना प्रस्तुत की गई है उसके विभिन्न आयामों के सैद्धांतिक और व्यवहारिक पक्षों की विवेचना की गई है। उनके शिक्षा चिंतन में एक नागरिक के विकास के लिए जिन मूल्यों की स्थापना की गई है उनकी आधुनिक विद्यालय, शिक्षक, पाठ्यक्रम और शिक्षण–शास्त्र के साथ तुलना की गई है। गाँधी के शिक्षा चिंतन में उपस्थित उनके ग्राम–स्वराज और आर्थिक दर्शन को रेखांकित किया गया है और समुदाय एवं शासन के मध्य एक व्यक्ति की भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

मुख्य शब्द– समुदाय, परम्परा, संस्कृति, धर्म, शिक्षा

विमर्श

महात्मा गाँधी ने अपने जीवन में सभी सैद्धांतिक प्रतिमानों को दर्शन और व्यवहार दोनों स्तरों पर समानांतर विकसित किया है। सामान्य रूप से तो उन्हें अलग–अलग करके देखा ही नहीं जा सकता है, लेकिन जब आधुनिक शोध तकनीक से उनके जीवन और दर्शन को अलग–अलग कर लेते हैं तो उनकी छवि बदल जाती है। वे 20वीं सदी के दार्शनिकों की कतार में भी शामिल नहीं हो पाते हैं और न ही सामाजिक रूपांतरण के अग्रिम नेतृत्वों में उनका स्थान बन पाता है। इसलिए उनके चिंतन के हर पक्ष का विश्लेषण करते समय उनके द्वारा किए जा रहे व्यावहारिक प्रयोगों का आलोक लगातार बनाए रखने की आवश्यकता है। इससे उनके व्यक्तित्व के विरोधाभास भी उभरकर सामने आते हैं तो वे पक्ष भी स्पष्टता पाते हैं जिन्हें उनकी प्रार्थना सभाओं, भाषणों, लेखों और प्रवचनों के माध्यम से नहीं समझ जा सकता है। उदाहरण के लिए आधुनिक सभ्यता की उनकी आलोचना को समझने के लिए आवश्यक है कि आधुनिकता के साथ उनका व्यवहारिक संबंध क्या है? वे अखबार का संपादन करते हैं, वे रेलगाड़ी में चलते हैं, अपने अध्ययन के दौरान आधुनिक वेश–भूषा भी अपनाते हैं, ये सब आधुनिकता की ही उपज हैं

लेकिन इनके बावजूद वे आधुनिक सभ्यता को 'अतृप्त लालसा' कहकर उसकी आलोचना भी करते हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि गाँधी अपने चिंतन और व्यवहार दोनों में 'देशज आधुनिकता' की खोज करते दिखाई देते हैं। इस खोज के लिए उनकी प्रयोगशाला विशाल भारतीय समाज है जैसे लेनिन के लिए सोवियत समाज था और माओ के लिए चीनी समाज था।

चूँकि गाँधी जिस दौर में सार्वजनिक जीवन में रहे उस दौरान विश्व सहित भारत में भी आधुनिक शिक्षा अपना एक स्वरुप ले चुकी थी जिसका एक अलक्षित भय और कई बार आकर्षण गाँधी के शिक्षा दर्शन में दिखाई देता है। जब आधुनिक शिक्षा के प्रति उनका अनुराग सामने आता है तो वे शिक्षा में 'समानता' और 'न्याय' जैसे मूल्यों को प्रमुखता देने लगते हैं। क्योंकि गाँधी एक तरफ सनातनी हिंदू हैं जहाँ पर शिक्षा का अधिकार सिर्फ समाज के उच्च–वर्ण के पास ही है। निम्न वर्ण और स्त्रियाँ शिक्षा से सिद्धांत और व्यवहार दोनों स्तरों पर वंचित रहे हैं। यहाँ पर 'ज्ञान' का विशेषीकरण करके उसे भौतिक जीवन की प्रतिदिन की जरूरतों से दूर एक परलौकिक सिद्धि प्राप्ति का साधन माना गया। उसी परम्परा के वाहक होने के बावजूद गाँधी ज्ञान को कर्म से जोड़कर उसे भौतिक रूप प्रदान कर रहे हैं यानी कि वे उसके जनतांत्रिकरण के पक्षधर होते है। उनकी शिक्षा की यह आधारशीला उनके आधुनिकता बोध की वजह से ही संभव है लेकिन यहाँ भी वे अपनी परम्परा की प्रीत को नहीं छोड़ते हैं। वे 'ज्ञान' को पवित्रता की तरफ ले जाते हैं जबकि आधुनिकता उसे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मुक्ति का वाहक बनाती है। वे कहते हैं, 'शिक्षा का क्षेत्र जो बच्चों के भविष्य का बीज रखता है, उसकी मिटटी में उसे सत्य, निडर प्रयोगों की खोज में पूरी ईमानदारी और निडरता की आवश्यकता होती है, बशर्ते कि वे एक आवाज हैं और गहरे चिंतन पर आधारित हैं और उन्हें पवित्रता के जीवन से पवित्र किया है।' (कुमारप्पा, भारतन 1953 : 11) गाँधी जब शिक्षा के चिंतन की बुनियाद में ही 'पवित्रता के जीवन से पवित्र' की अवधारणा स्थापित करते हैं तो उनके चिंतन पर कुछ बाह्य कारक अतिरिक्त प्रभावी दिखाई देते है जिनका उत्तर वे भारतीय सनातन परम्परा में तलाश रहे हैं। इनमें सबसे प्रभावी बाह्य कारक साम्राज्यवाद है जिसके खिलाफ वे लड़ रहे है। हालाँकि पाश्चात्य चिंतन में शिक्षा का अमूर्त लक्ष्य व्यक्तिवादी चिंतक व्यक्ति के जीवन को आनंदपूर्ण बनाने तक ले जाते हैं जो उनकी एक 'पवित्र' भविष्य की परिकल्पना है। लेकिन गाँधी तो इससे आगे जाकर 'पवित्रता के जीवन से पवित्र' की बात करते हैं यानी कि उनके अवचेतन में दो शक्तियाँ कार्य कर रही थीं, एक तो साम्राज्यवाद के विरोध में निरंतर चलने वाली तर्क पद्धति थी जिसमें वे 'पश्चात्यता' से अलग 'प्राच्य' जीवन चिंतन के विकास को स्वयं की

प्रमुख जवाबदेहिता मानते थे। इसलिए उनकी शिक्षा की आलोचना का आधार पाश्चात्य शिक्षा बनी। हालाँकि गाँधी की खुद की शिक्षा भी आधुनिक शिक्षा थी लेकिन वे हमेशा स्वयं को एक गुलाम मुल्क के व्यक्ति के रूप में ही देखते रहे। वे साम्राज्यवाद की सांस्कृतिक श्रेष्ठता को तोड़कर भारतियों में सांस्कृतिक आत्मसम्मान की भावना पैदा करना चाहते है। इसी कारण उन्होंने दुनिया की आधुनिक शिक्षा को साम्राज्यवाद के दुर्गुणों के साथ ही जोड़कर देखा। आधुनिक शिक्षा की उनकी आलोचना में वे कहते हैं, 'वर्तमान शैक्षणिक पद्धति की सबसे बड़ी बुराई जो अपने आप गहरे दोषों का परिणाम है, वह यह है कि इसने हमारे अस्तित्व की निरंतरता को तोड़ दिया।' (कुमारप्पा, भारतन 1953 : 11) इस बाह्य दवाब ने हमेशा उन्हें अतीत–उन्मुख बनाया जहाँ पर वे अलौकिकता, अमूर्तता और अंततः धार्मिक चिंतन की आस्था से इसका जवाब देते दिखाई देते हैं। इसलिए उनके चिंतन में परिवार जैसी भारतीय इकाई सबसे महत्वपूर्ण हो जाती है।

गाँधी के शिक्षा चिंतन के इस बुनियादी पक्ष का व्यावहारिक रूपांतरण उनके आश्रम व्यवस्था में दिखाई देता है। चूँकि यहाँ गाँधी एक और अंतर्द्वंद का शिकार हो जाते हैं। वे दर्शन के स्तर पर अराजकतावादी हैं जहाँ वे किसी भी तरह के ढाँचे को स्वीकार नहीं कर रहे हैं, यहाँ तक की प्रचलित सनातन हिंदू धर्म के चिंतन पक्ष का अनेकों बार अतिक्रमण करते दिखाई देते हैं। लेकिन शिक्षा के व्यावहारिक प्रयोग में जब 'आश्रम–व्यवस्था' स्थापित करते हैं जो अपने आप में एक औपचारिक ढांचागत व्यवस्था है। आश्रम के लिए उन्होंने स्वयं शिक्षक से लेकर रोजाना के नियम–कायदों को जरूरी माना है। तब क्या यह मान लिया जाए कि गाँधी शिक्षा के चिंतन और व्यवहार में अपने अराजकवादी दर्शन से विमुख हो जाते हैं। ऐसा नहीं होता क्यों गाँधी ने अपने चिंतन को ही दो पक्षों में बाँट लिया था, एक पक्ष 'आत्मिक चिंतन' का था जिसमें वे हमेशा अलौकिक परमानंद की तलाश में व्यक्ति को तमाम भौतिक साधनों और शक्तियों से दूर करते हैं। उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता भी इसी पक्ष में समाहित है, जब वे ऐसा करते हैं तो किसी भी भौतिक ढाँचे का व्यक्ति पर नियंत्रण स्वीकार नहीं करते। वे उसे अपने 'आत्म' के नियंत्रण में कर देते हैं। यह 'आत्म' इतना अधिक भिन्नता वाला और आकारविहीन होता है, इसलिए इसका सामाजिक–राजनीतिक संदर्भों में उपयोग नहीं हो सकता है। उनके चिंतन का दूसरा पक्ष पूर्णरूप से भौतिक है जहाँ पर वे शोषणविहीन समाज की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं और साम्राज्यवाद का विरोध करते हैं। उनके चिंतन के इस भौतिक पक्ष में 'देशज आधुनिकता' शामिल है और शिक्षा के चिंतन के एक आत्म पक्ष वाले हिस्से को निकाल दिया जाए तो स्पष्ट रूप से एक आधुनिक शिक्षा का एक देशज

मॉडल उभरकर सामने आता है जो पूरी तरह से ढाँचागत व्यवस्था में विश्वास रखता है।

इस ढाँचे को समझने के लिए राज्य, समुदाय और शिक्षा के अंतर्संबंधों को समझाना आवश्यक है। वे राज्य और समुदाय के मध्य शिक्षा व्यवस्था का एक सामंजस्य करते है जिसमें समुदाय को अधिक शक्तिशाली रखने का प्रयास करते है। उनकी विद्यालय की संकल्पना में समुदाय ही महत्वपूर्ण है, यह भी कहा जा सकता है कि उनके शिक्षा का ढाँचा विकेंद्रीकृत, आत्मनिर्भर (समुदाय पर) और सह–अस्तित्व पर आधारित है। वे समुदाय पर विद्यालय की इस तरह से निर्भरता कर देते हैं कि शिक्षक अपनी जरूरतों को श्रम करके समुदाय से पूर्ण करे। चूँकी जब विद्यालय समुदाय पर इतना निर्भर हो जाता है तो वह अपने स्वतंत्र और निष्पक्ष मूल्य विकसित नहीं कर पाता है और समुदाय के मूल्यों को अपना लेता है। चूँकी आधुनिक शिक्षा के मूल्य भी आधुनिकता से ग्रहण किये हुए हैं जिनके कारण विद्यालय अपने वैचारिक स्वरुप में समुदाय से आगे होता है और उसका नेतृत्त्व करता है। समुदाय में हजारों बुराइयाँ हो सकती हैं लेकिन विद्यालय में बुराइयाँ नहीं हो सकती हैं। उदाहरण के लिए समुदाय में जाति–व्यवस्था की बुराई भारत में सर्वत्र व्याप्त है लेकिन विद्यालय को इससे मुक्त होना चाहिए। इसलिए गाँधी का समुदाय पर ज्यादा विश्वास करने के दो संभावित परिणाम हो सकते हैं, पहला परिणाम तो यह कि समुदाय के सारे मूल्यों को एक मान्यता प्राप्त हो जाती है चाहे वे दकियानुसी और शोषण आधारित क्यों न हो। दूसरा परिणाम यह है कि इससे राज्य की जिम्मेदारी कम होगी जो पूँजीवादी लोककल्याणकारी राज्य और समाजवादी राज्य दोनों के अहितकारी है।

गाँधी का जीवन और दर्शन दोनों ही नैतिकता से परिपूर्ण हैं जिसमें वे इन नैतिकताओं का अधिकांश हिस्सा हिंदू धर्मग्रंथों से ग्रहण करते हैं। हालाँकि वे अपने शिक्षा दर्शन में 'सर्वधर्म सम्भाव' और इसी पर आधारित देशज सेकुलरवाद का निर्माण भी करते हैं। उनकी आश्रम व्यवस्था में नैतिकता के नियमों को वे 'आश्रम के व्रत' के नाम से संबोधित करते हैं जिनमें प्रमुख रूप से शामिल हैं, 'सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अभय, अस्पृश्यता निवारण, शारीरिक श्रम, सहिष्णुता, स्वदेशी, अपरिग्रह, अस्तेय और अस्वाद।' (शर्मा, बी.एम. 2020 : 119) आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इन व्रतों में कहीं भी तर्क, विवेक और चेतना से संबंधित आधुनिक शिक्षा से जुड़े ज्ञान–विज्ञान की बात ही नहीं की गई है। इसका कारण यह है कि गाँधी के 'सभ्यता' के परिकल्पना में विज्ञान का सीमित स्थान था, उसका काम कुछ जरूरी सुविधाएँ उपलब्ध कराने जितना मात्र ही था। विज्ञान आधुनिक जीवन के तरह मनुष्य के जीवन पर हावी होने के बात से गाँधी के गहरे आपत्ति

थी। गाँधी न तो शिक्षा को मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवी निर्मित करने के साम्राज्यवादी नजरिये से सहमत हैं और न ही ग्राम्शी की तरह 'सभी मनुष्य दार्शनिक हैं।' (ग्राम्शी अंतोनिया 2002 : 101) मानते हैं। वे तो मनुष्य को 'आत्म–साधक' मानते हैं।

महात्मा गाँधी शिक्षा को 'अक्षर ज्ञान' से जोड़ने बिल्कुल भी सहमत नहीं हैं जो वर्तमान तक आते–आते कुछ 'क्षमताओं' और 'योग्यताओं' तक सीमित हो गया है। आश्चर्यजनक यह भी है कि वे शिक्षा का 'देशज ढाँचा' खोज रहे हैं लेकिन परिभाषा उनको पसंद आती है अंग्रेजी विद्वान हक्सली की। वे कहते हैं, 'उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है जिसके शरीर को ऐसी आदत डाली गई है कि वह उसके बस में रहता हूँ, जिसका शरीर चौन से और आसानी से सौंपा हुआ काम करता है। उस आदमी ने सच्ची शिक्षा पाई है, जिसकी बुद्धि शुध्द, शांत और न्यायदर्शी (इंसाफ को परखने वाली) है। उसने सच्ची शिक्षा पाई जिसका मन कुदरती कानूनों से भरा है और जिसकी इंद्रियाँ उसके बस में हैं, जिसके मन की भावनायें बिल्कुल शुद्ध हैं, जिसे नीच कामों से नफरत है और जो दूसरों को अपना जैसा मानता है। ऐसा आदमी ही सच्चा शिक्षित (तालीमशुदा) माना जाएगा, कुदरत के कानून के मुताबिक चलता है। कुदरत उसका अच्छा उपयोग करेगी और वह कुदरत का अच्छा उपयोग करेगा।' (गाँधी मोहनदास करमचंद, 1909 रू 89)

महात्मा गाँधी के शिक्षा चिंतन में एक शिक्षक को आत्मनिर्भर और सहयोगी प्रवृति का होना चाहिए और शारीरिक दंड में तो उसे बिल्कुल विश्वास नहीं करना चाहिए। उन्होंने खुद भी शारीरिक दंड भोगा था, वे अपनी आत्मकथा में लिखते हैं, 'शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर जाइल्स विद्यालय की निरक्षण करने आए थे। उन्होंने पहली क्ष के विद्यार्थियों से अंग्रेजी के पाँच शब्द लिखवाये। उनमें एक शब्द 'केटल' था। मैंने उसके हिज्जे गलत लिखे थे। शिक्षक ने मुझे अपने बूंट की नोक से मारकर सावधान किया।' (गाँधी मोहनदास करमचंद 1955 : 10) हो सकता है कि उनके विचार पर अपने भोगे हुए यथार्थ का भी कुछ प्रभाव पड़ा हो।

महात्मा गाँधी के शिक्षा चिंतन का सबसे बुनियादी पहलु भाषा को लेकर उनका दृष्टिकोण है। उस समय जिस तरह से 'अंग्रेजी' भाषा साम्राज्यवाद का वाहक बनी और भाषाई श्रेष्ठता के माध्यम से लोगों को गुलाम बनाया गया। उसी तरह से सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के दौर में आज भी भारत सहित विश्व के अनेक देश 'अंग्रेजी' के आतंक के मुक्त नहीं हो पाए हैं। इसके परिणामस्वरूप विश्व की अनेक स्थानीय लोक बोलियाँ और भाषाएँ संकट से गुजर रही हैं। इसलिए गाँधी का मातृभाषा में शिक्षा का प्रस्ताव बहुत उपयोगी

है। उनकी शिक्षा कमजोर के प्रति करुणा जगाती है, सबके लिए शिक्षा की पैरवी करती है, श्रम से प्यार सीखाती है, आध्यात्मिकता को महत्त्व देती है लेकिन अतिरिक्त मूल्य के हस्थगन और भौतिकवाद पर मौन रहती है। यही कारण है कि महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका में फिनिक्स और टॉलस्टॉय एवं भारत में कोचरब, साबरमती और सेवाग्राम जैसे आश्रमों की स्थापना की थी वे कभी शिक्षा के मॉडल नहीं बन पाए।

संदर्भ

1. कुमारप्पा, भारतन, टु वर्ड्स न्यू एजुकेशन, 1953, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।
2. शर्मा, बी.एम., गाँधी आश्रम, 2020, जयपुर, रावत पब्लिकेशंस।
3. ग्राम्शी, अंतोनिया, सांस्कृतिक और राजनीतिक चिंतन के बुनियादी सरोकार, 2002, दिल्ली, ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन।
4. गाँधी मोहनदास करमचंद, हिंद स्वराज, 1909, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।
5. गाँधी मोहनदास करमचंद, सत्य के साथ मेरे प्रयोग, 1955, अहमदाबाद, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस।

Globalization and Aspirations : An Empirical Study in Popular Youth Culture of India

Dr. Gajendra Kumar Maharia

Abstract: Globalization is not only a socio-cultural and economic process but it is also a peculiar kind of consciousness. The exposure to the global cultural flows alters the ways of thinking and acting at the individual level whereby the aspirations, attitudes, values and lifestyle choices undergo changes. As a consequence new peculiar consciousness develops. This paper, one among the series based on field work, makes an attempt to chart out the impact of globalization process on the few selected aspects — residence, migration to alien lands and participation in public life (Politics).

Keywords: Popular, Youth Culture, Globalization, Aspirations, India

Globalization has brought about a profound transformation in the aspirations, attitudes, values and everyday lives of young people. The exposure of youth to global mass media and information and communication technologies (ICTs) has encouraged the development of a global youth culture and facilitated the spread of western cultural practices. Jan Aart Scholte (2000) argues that much of global culture is youth culture, as global consumerism has linked young people around the world to the extent that it has guided the construction of a dominant value system. Youth develop a global consciousness and begin to identify themselves with worldwide culture dominated by western symbols and ideas like individualism, liberalism, freedom, consumption oriented lifestyles, material values etc. Youth increasingly refer their social interactions and lifestyles to global coordinates, though still embedded in local cultural settings. Kevin McDonald (1999) contends that young people's experience with globalization constitutes a delicately balanced struggle for independence and success that is as much about constraints and

limitations as it is about freedom and opportunity. Youth all over the world struggle to define their own identities and find clear way in life, in a global post-modern world in which accepted truths are increasingly being challenged and shattered. In social transformation precipitated by globalization, youth are not passive recipients of changes but they have a significant say in the impact such changes have on their lives.

Changes in youth's aspirations, attitudes and values are important markers of long term social change. Youth's experience with globalization appears to be fraught with uncertainty, though the degree of that uncertainty varies according to cultural and social contexts (Furlong and Cartmel 1997). These uncertainties inform their aspirations, attitudes and values. Local material conditions also constrict changes in the ideas of youth in globalization process because when youth connect to global consciousness, they also retain a parallel local sense of living. Hence, their aspirations, attitudes and values transform into a hybrid variety. Consequently, youth experience a local pull along with global cultural flows. For example, their economic/job aspirations might be graduated to global levels but their role obligations towards family and community still influence their decisions. Ideas of individualism, liberalism, materialism etc make youth aspire for material success in life, so their attitude towards social processes and institutions like marriage, family, migration, achievement, mobility etc change. For example, global economy requires longer amount of education and training, so youth's marriage plans are postponed and their attitudes towards new type of male-female relations like live-in relations, take positive shapes. It appears that an increasing awareness amongst youth about global scenario affects their thinking and ideas too.

Aspirations: Aspirations play a very significant role in determining one's life course and life outcomes. They are the pilots and determinants of the individual on the life course. Aspirations motivate one to negotiate the life struggles, challenges and pains. Similarly, Appadurai (2004) also defines aspirations as a 'capability'. However, a number of factors influence the aspirations including the material and socio-cultural settings. The phenomenon of global consciousness is also a very important factor in contemporary world.

Aspirations of the youth can be used as a very effective frame through which one can analyze how the processes of globalization is defining and deciding the choices. The globalization helps in creating a global consciousness among youth. It has upgraded their aspirations to a global level, particularly their material aspirations. Consequently, their aspiration are no more bound to immediate socio-cultural setting, rather entire globe has become a frame of reference for them. ICTs and global mass media have become the space of fuelling and fulfilling the aspirations. Youth appear to aspire good life and are ready to do hard work to achieve that.

Indian youth lived their lives in a local and national sphere before globalization. But now, Indian youth's aspirations, attitudes and values are also changing as they increasingly associate themselves with global mass media culture, ICTs, western values, American popular culture etc. And the impact of globalization process is increasingly manifested in a liberalized economy as well as in socio-cultural and political arena. This process has specially accentuated since Indian economy began to globalize and integrate in global economy in early 1990s. However, the association of youth with globalization process is determined by various complex set of socio-cultural factors like class, caste, region, education differentials. So the level of engagement may vary for the youth of periphery and centre in the globalization process.

Research Methodology: This is yet another paper in a series of papers based on the data collected by the author for the doctoral thesis. The universe of this study was defined as 'all Indian educated youth (male & female) in the age group 18-35 years hailing from villages, towns and cities'. The 'educated youth' here, refers to the one who had finished his/her education of 12th level successfully. Non-probability purposive sampling has been applied in this study for a sample of 300 youth whereas data were collected through a semi-structured interview schedules.

In view of the phenomenon of globalization, this paper makes an attempt to map the impact of globalization process on the few selected aspects of aspirations of youth in Indian society. These aspects include residence, migration to alien lands and participation in public life (Politics).

Residence and Migration : The desire of an individual to settle is a good pointer of aspirations. Equally, the desire to migrate abroad also indicates an individual's global consciousness. Indian youth are fascinated by the urban life exposed by mass media and culture industry and they consider urban areas a platform for material success in life. Here, this aspect of youth aspirations has been mapped.

Table 1: Preference to Live and Settle

Place of preference	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
City	95	63.3	109	72.7	204	68.0
Town	43	28.7	33	22.0	76	25.3
Village	12	08.0	08	05.3	20	06.7
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

Table 1 displays that majority of youth (68.0%) want to live and settle in cities. Town as a choice of 25.3 percent youth follows the city. Only 06.7 percent youth expressed their wish to live in village. There was not a single respondent from town and city who wanted to live and settle in village. Youth want to settle in cities not only for better job and study facilities but also for a better lifestyle also.

Table 2: Ready to Go Abroad for Job

Readiness	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Definitely yes	67	44.7	62	41.3	129	43.0
Yes	23	15.3	20	13.3	43	14.3
Can't say	29	19.3	17	11.4	46	15.3
No	31	20.7	51	34.0	82	27.4
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

The data in table 2 above show that 43.0 percent youth are 'definitely' ready to go abroad for a job and 14.3 percent are just ready to go. It makes 57.3 percent combinedly. Besides this, 15.3 percent respondents are there who appeared to be indecisive. It can be concluded that majority of youth are ready to go abroad for a job. It's symbol of global consciousness.

Table 3: Ready to Go Abroad for Study

Readiness	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Definitely yes	79	52.7	63	42.0	142	47.3
Yes	14	09.3	29	19.3	43	14.3
Can't say	31	20.7	25	16.7	56	18.7
No	26	17.3	33	22.0	59	19.7
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

It is evident from table 3 above that overall 47.3 percent youth are 'definitely' ready to go abroad for study whereas 14.3 percent are just ready to go. It means combinedly 61.6 percent youth are ready. Youth are aware of the liberal financial facilities available from banks for educational purposes and want to make use of it to go abroad for studies. To sum up, youth are ready to go abroad for studies. It's no more a domain of high classes only.

Table 4: Ready to Migrate Abroad to Settle Down

Readiness	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Yes	37	24.7	46	30.7	83	27.7
No	71	47.3	69	46.0	140	46.7
Can't say	42	28.0	35	23.3	77	25.6
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

Table 4 above exhibits that only 27.7 percent youth are interested in settling down abroad. It was clear that though youth want to go to foreign countries for education, tourism, job etc but the idea of permanently living there doesn't go well with them. Their priority in this matter is motherland, India only. It appears that a traditional pull is still working on them in this regard.

Table 5: Ready to Migrate within India for Job

Readiness	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Yes	113	75.3	120	80.0	233	77.7
No	19	12.7	17	11.3	36	12.0
Can't say	18	12.0	13	08.7	31	10.3
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

The analysis of table 5 informs that 77.7 percent youth are ready to go anywhere within India for doing a job. Interestingly, females are more eager with 80.0 percent than males with 75.3 percent. It's the mobile and consumer revolution which has facilitated the mobility of youth. They are always in touch with home, so going to the far flung areas is no more a mental block for them.

Public Life (Politics): Indian youth have been influenced by public celebrities but their participation in public is less and they appear to be disconnected from public life. This explains the absence of any youth movement in India despite having the largest pool of youth in the world. The main reason behind limited participation in public life is the trust deficit in political leadership. Though there are signs that indicate that traditional patterns of public life participation are being replaced by new patterns of civic engagements invented by youth like Internet activism, civil society etc.

Table 6: Aspiration to Join Politics

Aspire	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Yes	61	40.7	23	15.3	84	28.0
No	68	45.3	97	64.7	165	55.0
Can't say	21	14.0	30	20.0	51	17.0
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

A look at the table 6 makes it clear that youth are disinclined to join politics. A massive 55.0 percent of respondents appeared to be disinclined. And in this regard, the female (64.7%) outnumbered the males (45.3%) by a big margin. It's very discouraging as the female participation in politics is already low in India. In conclusion, youth dislike joining politics and female youth even more so.

When the reasons were elicited from the respondents for not liking the politics, it appeared that the image of political leaders in the eyes of youth is the main culprit. In their eyes, political leaders are corrupt, criminals, fraudulent, deceitful and dirty. Youth think that in politics, one has to become necessarily corrupt to win election. So they want to remain away from it. The perception of political life by the youth is quite negative.

Table 7: Influence of Public Figures on Lifestyle

Influence	Male		Female		**Total**	
	N	%	N	%	**N**	**%**
Yes	143	95.3	141	94.0	284	94.7
No	04	02.7	02	01.3	06	02.0
Can't say	03	02.0	07	04.7	10	03.3
Total	150	100	150	100	**300**	**100**

Analysis of table 7 data shows that a whopping 94.7 percent youth are influenced by public figures in their lives. In this matter, there was no difference of opinion on the basis of gender. Public figures included by youth were Bollywood actors, cricketers, sports stars, corporate personalities, young politicians like Rahul Gandhi, Sachin Pilot, Omar Abdulla, Akhilesh Yadav etc.

Summary

The study indicates that globalization has penetrated the lives of youth through mass media along with assorted information technologies. This has brought changes in the consciousness, lifestyle and popular practices of youth in India. Aspirations, attitudes and values of the contemporary Indian youth are no exceptions to it. And now youth are increasingly adopting global perspectives.

The findings of the study suggest aspirations of youth have got upgraded due to their exposure to the global culture and liberal economy. Global mass media has fuelled their material dreams. Youth are ready to explore global avenues to fulfil their aspirations. Most of the youth desire to live and settle in a city/town as they consider urban areas a platform for material success in life. There was not a single respondent from town and city who wanted to live and settle in village and only the few wanted to stay in village. The gender bias is absent here. Furthermore, showing an instance of global consciousness, majority of are ready to go abroad for a job and studies. However, despite the fact that youth want to go to foreign countries for education, tourism, job etc but only a minority of them desire to settle abroad permanently. But within country, a big majority is ready to go anywhere for a job. Perhaps, communication technologies have facilitated their mobility as they can always remain in touch with family. No gender bias was visible here too.

On the question of participation in public life, youth came out to be less interested though they almost all acknowledge the influence of public figures on their lifestyles. In this matter, there was no difference of opinion on the basis of gender. But only small portion of youth were inclined to join politics and in this regard, the male outnumbered the females by a big margin. It’s very discouraging as the female participation in politics is already low in India. It can be

concluded that, youth dislike joining politics and female youth even more so. It appeared that the image of political leaders in the eyes of youth is of corrupt, criminals, fraudulent, deceitful and dirty people. Youth think that in politics, one has to become necessarily corrupt to win election. So they want to remain away from it. The perception of political life by the youth is quite negative.

References :

1. Appadurai, Arjun. 2004. ‘The Capacity to Aspire: Culture and the Terms of Recognition’, in Vijayendra Rao and Michael Walton (eds.): Culture and Public Action. Stanford: Stanford University Press.
2. Chaney, D. 1996. Lifestyles. London: Routledge.
3. Furlong, A. and F. Cartmel. 1997. Young People and Social Change: Individualization and Risk in Late Modernity. Buckingham: Open University Press.
4. McDonald, K. 1999. Struggles for Subjectivity: Identity, Action and Experience. Cambridge: Cambridge University Press.
5. Ray, D. 2006. ‘Aspirations, Poverty and Economic Change’, in A.V. Banerjee, R. Bénabou and D. Mookherjee (eds.): Understanding Poverty. Oxford: Oxford University Press.
6. Scholte, J.A. 2000. Globalization: A Critical Introduction. Basingstoke: Palgrave.
7. Waters, Malcolm. 1995. Globalization. London and New York: Routledge.

Professor (Sociology)
S. K. Govt. Girls College, Sikar (Rajasthan)

History and Contribution of Sãngaliyã Dhuni of Shékhãwãti Region: Special Reference to Bãbã Khinvãdãs Mahãrãj

Dr. Har Lal Singh

Abstract: Sangaliya Dhuni is the centre of sadhana of Aghori tantriks. Here emphasis is given on the origin of spiritual consciousness, expansion and personality development through character refinement. Baba Khinwadas was one such saint of this Dhuni who broke away from the norm and established a college giving priority to higher education and used it as the main source for social change. This is the reason that sets him apart from other saints.

Master Keys: Sangaliya, Aghori, Khinwadas, Education & Compassion

Introduction and Location of Shekhawati and Sangaliya

Shekhawati is a unique zone in the past courtyard of Rajputana, which has its own glorious past and rich culture. This zone was founded by Rao Shekha of Amarsar Nayan, located in the state of Jaipur in the 15th century. Later his descendants conquered the neighboring areas and merged them in his kingdom. Although this area was divided into pieces, it was jointly called Shekhawati. (Singh, 2019)

Sanglia is located 35 kilometers from Sikar district headquarters of Dhuni Shekhawati region on the Jodhpur road. According to public opinion, Sanga Baba (Swangi) came here about 450 years ago. Sangaliya village was named after him. But the work of establishing Dhuni Mata located here and showing miracles to the people was first done by Baba Lakkad Das. (Meghwal, 2018) Akhada, Sangaliya Peeth, Adudham, Bagichi, Dhuni and Dargah are known as 360 years old today. This dhuni is related to Dadu Panthists and Nath sect of Abohar (Rohtak). (Kumar, 2013)

Sangaliya's Historicity

During the research trip, I have found pieces of pottery, earthen amulets, parts of broken cups and stone balls in the ashram of Sangaliya Dhuni. This was possible only when pruning of groundnut produced in the agricultural land of the ashram was going on. (Singh, 2019) The period of these archaeological evidences can be determined between the Sunga and Kushan periods. (Meena, 2019) The shapes of the amulets made of clay from here prove the tantricity of this fumigation. Apart from this, there are also two archaeological evidences. Although these evidences are modern, they are important from the point of view of history. One article is from the cenotaph of Sanglia Dhuni Mata, according to which- "This cenotaph is built by Babaji Shri Shri Lakkad Das Ji Baba Shri Shri Mojidas at Dhuni, Thakur Saheb Shri Narayan Singh ji. Mitti Mangsir Sudi p. Date of year Samvat 2010. "The second article is from the well located in Dhuni according to which- ॐ Ladudasji, a disciple of Swami Mandasji, made a well to Miti Bhadwa Sudi Poonam Samvat 2015. (Singh, 2019) According to the present Peethadhishwar Shri Shri Omdas Ji Maharaj- "Sanga Baba came here about 450 years ago. Sangaliya village was named after him.” (Maharaj, 2019) But the work of establishing Dhuni Mata located here and showing miracles to the people was first done by Baba Lakkad Das Ji Maharaj. In the light of the above evidence, we can say that the history of Sangaliya village is about 2200 to 1900 years old from today. Apart from these, villages named Saami and Shisham are also associated with Sanglia. About whom a follower is prevalent in this region-

Saami Shisham Sangalyo!
Teen Gaanv Manglyo!! (Gularam, 2019)

Dhuni Mata

Although the use of Tantra and Yantra is very old in Sanglia village, the work of establishing Dhuni Mata and showing miracles to the people was first done by Baba Lakkad Das. (Meghwal, 2018) Fumigation is an important part of fire. This Dhuni is practiced and worshiped in Sangaliya Ashram. The seeker first pays obeisance to this dhuni. Dhuni's holdings or fire are always ignited. Bhabhoot or ash-seekers made of tillage are applied on their foreheads. Earlier the

sages here used to rub this ash all over the body. This is a fumigation made by chance with Shiva and Shakti. Who is called here as mother. This is Ardhanarishvara Shakti. Therefore, the seekers here use the ingredients of female adornment on half of the body. Like wearing chunri on half of the body, putting kajal or antimony in one eye, wearing pajeb in one leg, wearing bangles in one hand, wearing trident in one hand etc. Such seekers can still be seen on Sangaliya Dhuni. In this, the names of Nopdas, Roopdas and Kishan Das of Parasampura can be named in Sanglia Dhuni. (Singh, 2019)

Figure 1 Cenotaph of Dhuni Mata, Image of Beej Mantra-Tantra and Ardhnaarishwara

Saryangi Sect

The historical meaning of the word Sarvangi is from the name of Aghor Panth or the person of Aghor Panth. (Kumar, 2013) According to Baba Khinvadas and seeker Shyamaram Mawa, "From Brahman to Bhangi everything is equal." Here the meaning of sar is all; Out of all and omitted, the sar is left and the meaning of bhangi is originated from the black mother. (Kumar, 2013) According to Omdasji Maharaj, except in human beings, no object of nature makes any difference in the hands of the user, in the same way, the significance of the Saryangi is also that the head ie the water of the pond and the yangi does not produce any difference in the body. (Maharaj, 2019) The Saryangi sect of Rajasthan is known by many names. Such as Saryangi, Sarvangi, Sarbhangi, Avadhoot (Aghor), Borangi, Angam Panth, Baul Panth, Ghure, Auliya, Adi Dharma, Shakta Sampradaya, Mahadharma, Sanglia, Oudar Panth, Kapalik, Sankalya, Malang, Benami (Anami) Panth, Ghunia, Vratya, Padda Dharma, Kunda Panthi, Siddha (Dravid) Kapilani, Kamadia, Aai Panth, Sikotaria, Udriya, Kanchalia etc. (Kumar, 2013) Siddha sarvangi dhuna heats

up and defies external kicks. According to Baba Shyamaram, these Firangi castes like Yavan, Shaka, Hoon, Sunga, Pahlav, Kushan, Chola, etc. Gauravarni Angiras (Angira) Chitragupta, Nastya, Dutch, Portuguese etc. Late aristocratic supernatural Aryan castes descended from overhead country due to avatar She believes. (Kumar, 2013)

'Truth and Vipra Bahuda Vaddanti' is the same truth. But Dwij calls him in a different way. The basis of religion is dependent on the organism. The proceeds of the Siddhas show that the place of construction, sex, and religion is contained in it. The resurrection of the body is somewhat in line with the mating. This is the body or perfect due of Maya. But there is no Chinmaya body or knowledge body. All the Mars works of the world are done by the Siddha body.

Oughad cult is an ancient religious tradition. Its original source is the Nath Panth. Who was the founder of this virtuous ideology? Nothing can be said for sure about this. But this much is certain that these Kanfate have come out of the Nath sect itself. According to Bhairdas Maharaj of Rodu Nagaur, both Nath and Oughad are two branches of the same cult. When the Naths started settling in the family, the Aughad cults separated themselves from them. Because in the Oughad sect, there is no place for individual family. For them, the whole world is family. (Maharaj, 2019)

Major Saint

1. Baba Lakkad Das Maharaj - According to historical evidence, the first saint of Sangaliya Dhuni was Baba Lakkad Das Ji Maharaj. But it is difficult to tell where they came from? Based on the legends, it is said that Swami Lakkad Das Maharaj was born in the Sikligar family of Fatehpur. He left home early in childhood and reached a place called Abohar in the state of Punjab, keeping the company of sages. There for 12 years, the ascetic had given austerity to Agnee Lakkad Das with his fumigation. (Meghwal, 2018) It seems that Lakkad Das may have formed a group of sadhus. Later, due to a mutual dispute with his colleagues, he took Dhuni from Jalandhar in his Jholi or bag. Then the companions started raining to extinguish the dhuni (fire) with the yogbal but the seeker Lakkad Das could not touch the rain and there was thunderstorm and rain all around. Swami Lakkad Das, seeing the Sangaliya place awake and serene, set up a

permanent tomb in the crematorium in 1649 AD and fell into penance. (Kumar, 2013) Rangeya Raghav has written about Lakkad Das - "Stayed a few days in Agra crematorium, wearing Bhairava's chola. Lakkad Baba was of the Aai Panth, on asking that Gorakhnath was sitting on one side, Dattatreya on the other side, among the cults promoted by Shiva in the middle? Lakkad Baba's ears were not cracked, the rest are sengi, seli, rudraksh's garland, black ink-painted body, intermittent vermilion lines and hand-in-hand also shed light on the origins of the Aughad Peer and the Dattatreya sect. It indicates that in that period there was a deep upheaval in the sects of yoga. He was the only one of the numerous Baba Sanglia. (Kumar, 2013) People were afraid of Baba Lakkad Das because they were Aghori and used to eat and drink anything obtained from nature. But they were Vachan Siddh and used to remove people's grief from a distance by saying that "Go away, your misery will be eradicated". He had seven disciples who went to different places and took care of the sufferings of the people. A disciple tradition was established in Sangaliya from here itself. Among the disciples of Lakkad Das, Gulabdas Maharaj of Bidoli, Sut Prakash Maharaj, Balakdas Maharaj, Rangildas Maharaj, Bhavprakash Maharaj, Mangaldas Maharaj and Mitharam Maharaj were prominent. (Meghwal, 2018) Later, the tradition of these disciples also continued, which continues till today.

2. Baba Mangaldas Maharaj - Mangaldas Maharaj was born in Ladkhani Rajput family of Phogdi village of Didwana tehsil of Nagaur district. According to popular folklore, his mother lived in the service of sadhus and himself used to work in Jodhpur court. The people of the court used to taunt him again and again with his mother's service to the sadhus. Being disturbed by repeated tans, he came to his house with the intention of killing his own mother. But when Mangaldas reached home, he saw his mother killed by someone else. It is said that when you turned back, the mother's voice came and looked back and found that the mother is standing in front. Seeing this scene, Mangaldas grabbed his mother's feet and decided to walk the path indicated by him. Your mother said, take the utensils and bring it from the village and demand that no house be deprived. (Meghwal, 2018) It is said about this statement that –

Mangla Maya Tyag De, Haandi Le Le Hath!
Varana Chhattiso Maang Le, Mat Pooch Je Jaat!!

3. Baba Mitharam Maharaj - Mitharamji Maharaj was a disciple of Lakkad Das. After Mangaldas Maharaj, he got the privilege of becoming the third Peethadishwar of Sanglia Dhuni. (Meghwal, 2018) The bhajans composed by him are still sung with great respect in satsangs.

Chaal Sakhi Satsang Me Chala, Satsang Me Satguru Aasi!
Satguru Sharne Hojya Diwani, Nahin To Parle Bah Jyasi!!

4. Baba Ramdas Maharaj - Ramdas Maharaj was from Jogi family of village Sotwara of Nawalgarh tehsil of Jhunjhunu district. It is said about him that he killed the lion with one stroke of the sword. His samadhi is in Nawalgarh and his sword can still be seen in Sotwara village. (Meghwal, 2018)

5. Baba Ladudas Maharaj - Ladudas Maharaj Sangliya became the seventh and first historical Peethadishwar of Dhuni. Although his father was a resident of village Amarsar of Makrana tehsil but he spent his life in Kundal Ki Dhani in Sikar district. In his time itself, including Dhuni campus well, primary school, hospital and four wells were constructed in Shekhawati style in Sanglia village. He died on February 6, 1966. Baba Khinvadas Maharaj was also your disciple, who gave an attractive personality more than himself. (Meghwal, 2018)

Apne Sang Bhring Lat Kare, Shabd Sunade Gunjar!
Par Pakha Bhavro Bhayo, Ud Gayo Bhanvara Ke Laar!!

Ladudas Maharaj has a long disciple tradition. In which 12 disciples have been prominent. He built Tapobhumi and Ashram at various places. Among these disciples, Ziyadas Maharaj from Nagaur, Chunaram Maharaj from Rulyani-Sikar, Shyamaramji Maharaj from Mawa, Kumbhadas Maharaj from Khud-Sikar, Bhaumdas Maharaj from Bhaum Nagar-Dungargarh, Sankardas Maharaj from Suliawas-Dantaramgad, From Bhirana-Sikar to Aghori Baba, Baba Chetandas Maharaj from Didwana-Nagaur, Rameshwar Das Maharaj from Dundlod-Jhunjhunu, Baba Khinvadas Maharaj from Bithuda-Nagaur, From Chak Rohida Sambhar to Haridas

Maharaj and Kewaldas Maharaj from Gothada.

Apart from these, before Baba Khinwadas, Duladas Maharaj and Mandas Maharaj have been fourth and sixth Peethadishwar of Sangaliya Dhuni respectively.

Baba Khinvadas Maharaj

Baba Khinvadas Ji Maharaj was born in the year 1939 in village Bithuda in Ladnun tehsil of Nagaur district. His father's name was Khumaram and mother's name was Chauthidevi. His father was associated with Sangaliya Dhuni from the beginning. When Khumaram received the son Ratna in the form of Khinva, then dedicated to Ladudas Maharaj his child Khinva as his most loved object. (Meghwal, 2018)

Darshan Kar Prasann Bhaye, Saheb Sat Bohrang!
Khinva Kabhu Na Chhodiye, Satguruji Ka Sang!!

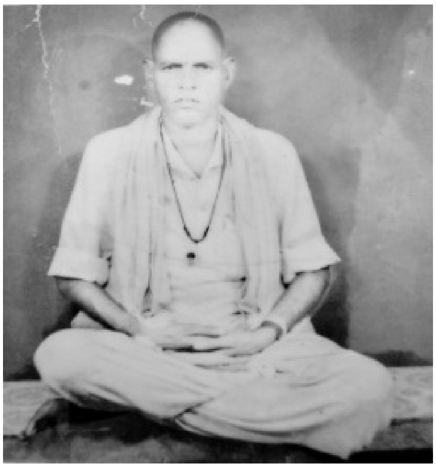

Figure 2 Baba Khinvadas Maharaj

Teachings of Baba Khinwadas Maharaj

Baba Khinwadas was dedicated to Baba Ladudas Maharaj by his father in his childhood. Therefore, his cultivation time was also the longest. During this period, he gave a new dimension to Sadhana and gained a profound experience. Which he shared with ordinary people through his hymns and sermons. His statements are known as his teachings. Although his philosophy is broad, his major teachings are

being mentioned here. The reference to the teachings of Baba Khinwadas is found in Chaubees Pramaan – Kamal Pramaan and Shri Sangalpati Bhajanmala. Although the teachings of Baba Kheeva can also be heard in oral form through the hymns of the seekers. Which are as follows:

1. Baba Khinvadas told the controversy over the name of religion through satsang that “many mysteries in the name of religion are seen in literature. Nobody knows what religion is? All people do different things in their own way. For example - there is an elephant. Six blinds went to see him. Everyone looked at it with their hands. A blind man got his hand on his trunk. One got his hand on his teeth. One got his hand on his ear. One felt his hand. One felt his hand on his stomach. One felt his hand. After seeing the elephant, they returned, then they started to tell us what the elephant is like. An elephant is like a snake. The other said, no, the elephant is like a big mace. The third said, no-no, elephant is like soup. The fourth said, the elephant is like a pole. The fifth said, No, the elephant is like a drum. The sixth said, no, the elephant is like a tree. The blind who had touched the part of the elephant, started fighting with it that the elephant is like this. A man with eyes emerged from there. He said, brothers, you quarrel unnecessarily. The trunk of an elephant is like a snake. His teeth are like mace, his ears are like soup. His legs are like poles. His stomach is like a drum. His tail is like a rough broom. You all have seen the same part of it differently. He has trunk too, teeth too. There are ears as well as eyes. Also have legs. Stomach and back too. What is made of all these together is the name of the elephant. The condition of religion is also similar. He is also very broad like an elephant. He has many parts. But, the spectacle is that someone has sat on one of his limbs, some on another. The person who has taken the organ, is considering it as the whole religion. We fight with each other like blind people. What I say is that "whatever I have caught, it is right." What you say is wrong. ”You repeat the same. Munde Munde Moorthybhinna!

2. There was no caste system in any religion in the practice of Siddha.

3. For the homemaker sadhak, Khinva says that "Parents are in the form of knowledge, brother is religion, wife is power and son is a symbol of forgiveness."

4. Baba Khinvadas propounded the importance of ancient Indian culture. Today's forgotten people have been instructed to follow their religion, rules and dignity.

Nem Dharam Maryada Chhori, Toot Gayi Kul Ki Kaan,
Raha Na Ansh Vansh Ke Mahi, Machi Khinchtaan!
Esa Ho Gaya Bhoop Bhikhari Re!

5. He has made a commendable effort to co-ordinate among the many sects of today, proclaiming the importance of religion.

Gaanv Gaanv Me Mela Bharije, Ghar Ghar Me Thaan!
Nana Panth Chale Duniya Me, Mach Gaya Toofan!!

Khinwa further says that firstly accept the creed which is worthy of respect. Test it first, make a unanimous decision, accept what is right and unite together.

Pol Panth Ki Karo Pariksha, Mat Dekho Aadar Bhav!
Sab Mil Ke Tum Karo Sammati, Lage Na Jam Ka Daav!!
Ese Sudhre Janta Saari Re…!

6. In order to remove the growing atrocities in the society, ‘Ram’ has given a message of remembrance.

7. Obscene songs are called Baba Khinwadas 'Oprah Geet' and those who have disbelief towards God are called 'Gaila'.

8. About true seekers or Sadhak, he says that "True seekers or Sadhak follow the ‘Shabd’ or ‘Vachan’ (word)."- Saadhu Jake Shabd Gati Hale, Samajh Guru Ki Puje Saar!

9. Baba Khinvadas has said that while teaching a man a dignified and loyal life-

Ek Boond ko Amar Piyalo, Doojo Hai Kaliyug Ro Kaal!
Rolam Rol Bharam Kar Bhulya!!
Ba Nugra Su Taal…!

10. Baba Khinvadas has told to take the teacher's education to awaken the Indian public- Jago Bharat ke Veero Re, Kukarma Ne Chhor Shiksha levo Guran Ri Re.

11. Baba Khinvadas gave encouragement to free thinking for the replacement of religion.

12. Baba Khinvadas has called the youth of India as 'Veer'. He has given a message to them that - Veera Naya Zamana Ayega, Hove Paap Ka Naas Dharam Jhanda Lehrayega…!

Khinva Philosophy

Baba Khinvadas gave a special type of philosophy through his practice. Which is called Khinva Darshan or Philosophy. The main theme of this philosophy is - The entire universe and the living world are part of the same entity. They call this power as Saheb. According to him, there is no high and low in the court of 'Saheb', he hears the call of everyone and cares for every living being.

Yog Yugat Se Sajiye, Kar Dil Apna Saaf!
Satya Saheb ka Naam Hai, Japiye Ajapa Jaap!!
Japiye Ajapa Jaap, Aap Me Aap Samave!
Tu Tere Ko Jaan, Jeev Mukti Pad Pave!!
Jahan Hansa Nirbhay Raho, Sada Anand Arog!
Khinva Satguru Dev Se, Mila Purab Samyog!!

Education, Health and Honor

Baba Khinwadas considered illiteracy the root of poverty, hypocrisy and superstition among the evils spread in the society. According to him, these evils can be overcome only by the light of education. For this purpose, he got the college constructed in Sanglia. Due to which the children of poor families from far away villages got an opportunity to get higher education and they could also understand its importance. This college has also been helpful in their employment generation. Baba Khinwadas Maharaj also provided financial assistance to poor and helpless people for marriage ceremonies of marriageable girls and for treatment of diseases of people. For your matchless contribution in the field of country service, human love and universal education he was honored with the Ambedkar National Award by His Excellency KR Narayanan, the

then President of India in New Delhi on 24 December 1998. This kind of honor is a matter of pride in the country of saints India. (Singh, 2019)

Nirvana

By proving Khinva name for the service of humanity, Baba Khinvadas merged with Panchatatva on 12 August 2001 on the day of Janmashtami. Baba Khinvadas Maharaj is not there in this world, but the people and saints of the land of Shekhawati are still in the heart. According to Madan Verma of Didwana-

Sangalpati Maharaj Ho, Baba Khinvadas!
Avtari Mahapurush Bhaye, Sumre Jinke Paas!!
Pad Paaya Nirvaan, Mitay Jati Karne!
Pal Pal Madan Ki Vinnati, The Aao Mhane Taarne!

Conclusion

Sangalia Dhuni is a vibrant establishment of the glorious cultural and historical heritage of the Shekhawati region. Where thousands of followers of all religions and castes congregate in Sangaliya Dhuni on both the fourteenth dates of every month and Amavashya-Purnima. It is the power of that tenacity land that once who has gone into this fumigation, he remains the same. The positive energy of ascetics can be felt in this fumigation. The creation of literature and history about Baba Khinvadas is a very secondary subject. Gestures can only be felt. Nevertheless, despite being history, it is still present and it is history even after being present. In the words of Peethadheeswara Om Das Sanglia Dhuni focuses on expanding spiritual consciousness and character refinement to create a personality that helps in the process of creating a responsible citizen as well as a truly compassionate human being.

Notes and References

Gularam Sadhak A Special Talk on Sangaliya Dhuni [Interview]. - Beri, Sikar : [s.n.], 10 November 2019.

Kumar Shravan Sarvangi Sampradaay - Saadhna aur Sahitya [Book]. - Jodhpur : Associate Book Company, 2013. - pp. 1, 2, 4, 32, 33, 34, 35, 38.

Maharaj Bhair Das A Special Talk on Sangaliya Dhuni [Interview]. - Roru, Nagaur : [s.n.], 2 November 2019. - BhairDas Maharaj has been a disciple of Baba Khinvadasji Maharaj..

Maharaj Omdasji A Special Talk on Sangaliya Dhuni [Interview]. - Sangaliya, Sikar : [s.n.], 8 November 2019.

Meena Madan Lal Data Anlysis of Sangaliya Dhuni. - Patan, Sikar : [s.n.], 11 November 2019.

Meghwal Mangilal Sangalpati Bhajnawali [Book]. - Nagaur : Sri Sukhram Baba Printers, 2018. - pp. 7, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 19, 23, 24, 25,.

Singh Har lal Narrative Portraiture in Haveli of Shekhawati Region with Special Reference to Museum Havelis in Nawalgarh, Rajasthan [Conference] = IAHC // Proceedings of Indian Art History Congress / ed. Nayar Preeta. - Guwahati, Assam : Indian Art History Congress, 2019. - Vols. XXVII Session, 2018, Thiruvanthapuram. - pp. 86-92. - 2454-8871.

Singh Har Lal Research Survey of Sangaliya Dhuni. - Sangaliya, Sikar : [s.n.], 8 November 2019. - Cenotaph and Well Iscription Write..

Om Das Badlav Charitra se lekar Chetna tak, Anjuman Prakashan, Prayagraj, UP 2024

Senior Fellow,
Department of History and Indian Culture,
University of Rajasthan, Jaipur
Email: h.s.dhandhuria@gmail.com

The Myth of Health Hazards from Cellphones

Balbir Singh Chaudhary

An absurdity.

Abstruct:- In India, there is a large scale fear about the mobile phone radiations being harmful. It is said in public media that it creates cancer, brain tumors. Some thesis for Ph.D etc confirmed that the mobile radiations adversely affect life and crops (Moong specially), butter flies and birds and honeybees lose their path. Some study in a busy mall near mobile towers report irritable behavior, loss of sleep, heat in body and depression.

Genesis of the problem:- The problem started when the word “radiation” was used for telecommunication signals. This word was used for nuclear reactions; and common public linked it with nuclear accidents. It appears that some professors used this word intentionally to gain public notice. Some thesis for Ph.D etc produced matching data to confirm the above imagined harmful effects.

This forced the authorities to enforce norms for the strength of the cell phone signals. But this enforcement of norms in India also failed to pacify the public protest against the communication authority. No other country accepted any such norms although some of their regulators proposed some limits. The telecommunication equipment and technologies are the same around the globe. These are not manufactured India specific. So such norms are obnoxious.

Electromagnetic waves are identified as medium and short wave, Very high, Ultra high, microwave, infrared, visible light ,ultraviolet, X-rays, gamma rays and cosmic rays, in ascending order of their frequencies . The frequencies starting from ultraviolet and above only are capable of ionizing the matter, and so, can affect the DNA can of living cells. Waves of lower frequencies cannot create such harm.

Electromagnetic waves are being used for communication by humanity since last 50 -60 years. The departments using them and their emission level are as written below;-

Aakash vani -----10-20 Kilo Watts (VHF),

Satellite transmitters—5-10 Kilo Watts (Micro-Waves),

Microwave oven in kitchen 1 Kilo watts,

RADARS, Narrow pulses in Mega Watts,

Police wireless ------20-50 watts (VHF),

First Generation Mobile system in New York—-250-500 Watts (UHF),

Micro waves for long distance communications------2-5 watts

Door Darshan, 10-20 Kilo Watts ,

Mobile telephony,------10 Watts (UHF) per antenna.

The mobile phone signals are electromagnetic waves in UHF band. The UHF range is much below the visible light and infra-red frequencies. The television frequencies are nearest to the cell phone emissions and are thousands of times stronger than the cell phone power. The antenna on a mobile tower can emits a power of 10 watts in UHF band. Normally it is set at 2 watts. We receive a signal power in Mili watts and Nano watts.

The radiation from sun is wide spectrum radiation having considerable energy in micro waves and UHF. It is of the order of 1000 watts per square meter on earth surface. Look at their radiation patterns of sun light in diagrams given below.

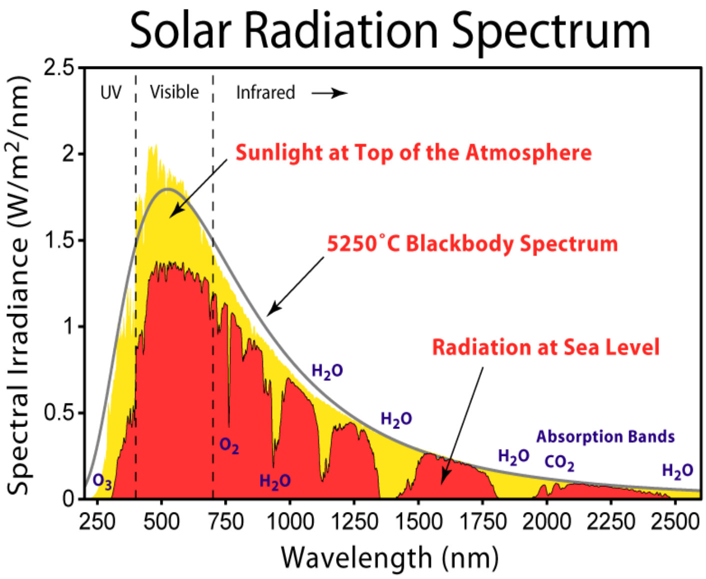

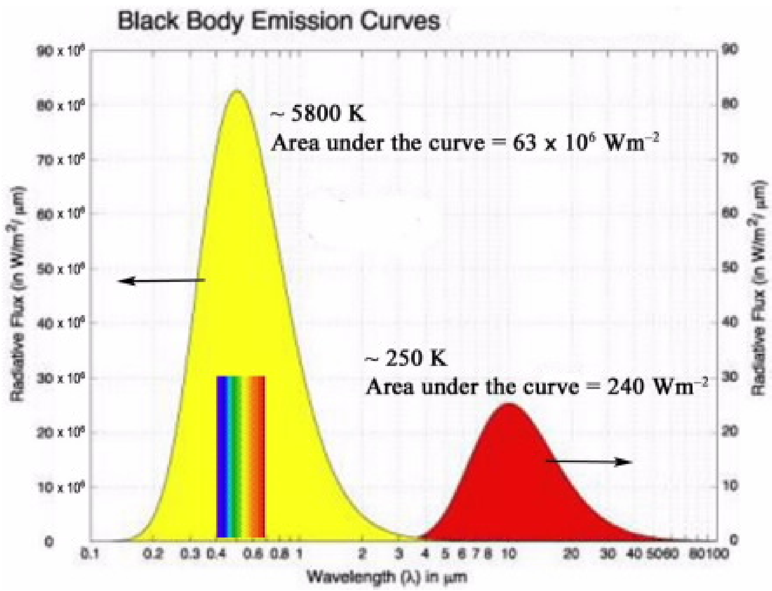

Diagrams are from the internet open source.

High power electric transmission lines, electric motors, railway engine and lines, spark plugs of vehicles, TV remotes, Computers and kitchens every matter which have a nonzero temperature, like living animals, vegetables, electric bulb, heaters, and outer universe

continuously emits a spectrum of these rays. Thermal radiation from the Earth is biggest source of radiation in the band of mobile telephony. It can be appreciated from this data that the mobile telephony signal is of no significance compared to the radiations from other natural sources.

Now let us examine our everyday experience-

1) If the radiation from towers could affect the life cells, then all bacteria, virus, fungus, protozoa, mosquitoes and flies and plants near the towers would have died or mutated leaving the area disease free. The life span of these organisms is few hours or days. Thousands of their generations have passed during last 15-30 years of exposure. We would have come across their many mutated species.

2) There are nearly three mobile towers per square kilometer in India. If we assume that each tower creates brain tumor in three families directly facing the antennae then there must be at least one crore brain tumor cases. Multiply the numbers due to very high power TV towers also. There is no such evidence!

3) The depth of penetration or skin depth of UHF waves is few micro meters in good conductors. UHF penetrating the conductive skin, thick skull and electrolytic fluids around the brain is not possible. Even in a lightening stroke, only the skin is burnt. Internal organs remain intact. If this causes cancer then the skin cancer, ear cancer, nose cancer or teeth cancer will precede the brain cancer.

4) Three lakh employees were working in field of telecommunication and equally in other departments. They are on duty for eight hours a day and are residing in the colonies hosting these sources of UHF/VHF throughout their lives. But there is no evidence of any higher incidence of brain cancer or any other specific health problems in these departments.

5) Some professor have suggested in their report to Govt that the cell phone radiation causes heat in body as the body contains 70 % of water. He suggested an exposure limit of 450 milii watts per square cm which will generate a heat of 1.6 milli watts per square cm in body. Learned professor missed the fact that the waves which can be absorbed by water are not used in communication. These will not reach the destination. He also missed that the exposure to sun gives

nearly 220 watts per square meter of infra red, which heats thousands of times more than UHF.

6) The birds prefer to lay their eggs in the microwave dish antennas and disturb communication. So the shrouds are used. The microwave or a TV tower is the preferred place of resting and nesting for the **bees, peacocks, crows** and eagles. Watch a photograph below

7) There is no gradual global down fall in the total production of any crop, leave Moong in particular, during last 25 years.

8) . In busy malls there is a heavy flux of strangers. Strangers cause secretions of adrenaline. The irritability or sleeplessness or mild depressions are all the well known consequences of the adrenaline. Some people answer 400 calls daily. This will affect their health irrespective of a mobile or a land line phone.

MOBILE HANDSETS, BASE STATIONS: MYTHS AND FACTS

Myths	Facts
Mobile phone use causes headache	Headache is not related to mobile phone use and there is no scientific evidence
It is safer using a mobile phone in a car as the vehicle shields the radiation	The Radio Frequency (RF) radiation by mobile phones increases to overcome the shielding in a car
Mobile phones cause brain cancer	There is no scientific evidence for this
Mobile base stations are dangerous and one should keep a distance from it	It is the antenna from which people should keep a distance not from tower and that too only if facing antenna at comparable height. At the ground level, the intensity of RF radiation from base station is low
Nobody is investigating the health effects of RF radiation	The World Health Organisation, many national & international organisations and independent expert groups investigate the health effects of RF radiation

The estimate of power received from the mobile signal:--

A cell phone tower can transmits a radio power of 10 Watt. The antennas are used to focus this power in the desired direction. Now let us mathematically calculate the maximum power which can be received by a person from the cell phone tower.

The antennas hoisted on mobile towers at a height of 40 meters. The emitted power density is increased by 20 times in the desired direction by using a 13 DB gain directional antenna. A person at ground will be approximately 50 meters away from these antennas. If we focus this antenna on this person directly, then he can receive a maximum power equal to 10 X (Antenna gain=20) /(4 X pi X 50 X 50) = almost 6.4 mill watts per square meter (by spherical geometry). If the antenna distance is 10 meters as a worst case then also the intensity will be 16 times or 100 milli watts. If we assume a worst case of 6 different operators are working on a single tower or 6 towers standing in a row near each other , and focus all directional antennae on him, then also more than 6.4mili watt per sq meter X 6= 0.04 watt cannot be thrown on him.

So no tower can ever cross the prescribed limit and no tower has ever crossed the norms in India so far.

In practice, the antennas are oriented to focus the power at around 5 kilometers away from a tower for optimum coverage. In such case the maximum received power will be exactly 10000 times lesser than the above worst case calculation i.e. micro watts.

There is no direct line of sight and focusing between the receiver and the tower in mobile communication. The signal is received after multiple reflections. In every reflection only one tenth of the signal survives. The signal inside a building is further 10 times less than outside it. Ignore the power loss due to Rayleigh scattering and absorption by atmosphere. The most likely received signal will be in Peco- Watts per sq meter. It is of no significance.

Real field measurement of power of mobile phone signal:--

The level of received power was measured by the author of this article. The results are produced below to draw the meaningful conclusions;-

Mobile phone signal power in room=0.320 milli watts. Cell phone while ringing, =877 milli watts. Power near tower in open ground (Naya Pura Kota)=2.52 milli watts.

The measured power from other sources in the same UHF band is as follows. Power near tube light= 1.378. milli watts. Mixie= 4.175 milli watts. Sun light = 1.67 milli watts.100 watt bulb=1.6 milli watts. Hot TAWA (plate on stove) =0.793 milli watts. Fire in lighted CHULHA (wood stove)=0.450 watts.

Media has reported measured power density in mobile telephony band between 5 to 10 watts per square meter at many congested places. Just by transmitting 10 watts or 100 watt (assuming there are ten mobile towers in area), a power density of 5 to 10 watts per square meter in a radius of 5 Km area cannot be created. It means creation of energy from free space.

Will the power intensity reduce by reducing the transmission power from the cell phone towers and increasing their numbers?

The answer is no! This will just be the reverse! For a two way communication between the tower and a mobile hand set, the minimum threshold power received by them from each other has to be the same. The path between them is common, linear and bilateral. It implies that the maximum transmitted power has to be the same for both. There is no use for any operator for transmitting the power, higher than a hand set. Hence there is no need of regulating the transmitted power from the tower. It is equal to hand set power itself, which is limited to two watts.

The emitted power of a hand set is dynamically balanced. Reducing the BTS power to 1/10 will result in increased power from the hand sets by the same figure, to account for the path losses. At threshold the hand set typically transmit ten lakh times (60 decibels) higher power to what it receive. If there are (say) 100 mobile phones are active, then their total radiated power will be 1000 times more. We should increase the power of transmitted power from towers to reduce the total power in the environment. I will still maintain that this power is no issue.

The people who are protesting against a cell phone tower 300 meters away from their homes generally carry one cell phone in their

pocket and maintain three to four cell phones in their homes. Thus they are always having what they call radiation equal to five towers within their homes and pocket.

Irrational ideas have no rational limits. It is the right time for creating a proper public understanding of the issue to remove the fears from public minds.

Balbir Singh Chaudhary
Retired from Indian telecommunication service.
Email-chaudharybalbir@gmail.com

Writer is a senior officer of Indian Telecommunication Services. He has an experience of nearly 25 years in dealing with radio communications